Fortnightly per copy Rs. 4/- only

ओ३म्

03rd April 2019

आर्य जीवन
ఆర్య జీవన్



संस्कृति संरक्षण व सामाजिक परिवर्तन का संकल्प
హిందీ – తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month

आर्य जगत के समस्त आर्य बन्धुओं को
आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र. -तेलंगाना की ओर से
श्री विकारि नाम नव संवत्सर की एवं आर्य समाज स्थापना दिवस की हार्दिक शुभकामनाएँ

ఆర్య జగత్తులోని
సమస్త ఆర్య
బంధువులకు
ఆర్యప్రతినిధి సభ
ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ
తరపున



శ్రీ వికారి నామ
నూతన సంవత్సర
మరియు
ఆర్య సమాజ స్థాపనా
దినోత్సవ

హృదయపూర్వక శుభాకాంక్షలు



यः प्राणतो निमिषतः

-प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

जीवन एक दुर्लभ तत्त्व है । मानव जीवन तो और भी दुर्लभ वस्तु है ।

**'दुर्लभ मानुष जनम है देह न बारम्बार।
तरुवर ज्यों पत्ता झरै, बहुरि न लागे डार ।।'**

मनुष्य से उच्च पवित्र अधिक सात्त्विक योनियां हैं और मानव जीवन से नीचे अधिक तामसी योनियां भी हैं -

**'देवत्वं सात्विका यान्ति, मनुष्यत्वं च राजसाः ।
तिर्यक्त्वं तामसा नित्य, मित्येषा त्रिविधा गतिः ।।'** मनु. १२-४०

जो सात्विक मनुष्य है, वे उत्तम देवकोटि को प्राप्त होते हैं । जो मध्यम कोटि के कम सात्विक, अधिक राजसीगुण वाले हैं वे मनुष्य योनि और जिनमें तमोगुण अधिक होता है वे नीच गति तिर्यक् योनि-पशु-पी, कीट, पतंग, वृक्ष-लता आदि की योनियों में जाते हैं ।

जीवन की ये विचित्र पहेलियां हैं । जीवात्मा का स्वभाव 'सच्चित्' बताया जाता है । आत्मा 'चित्' है, उसमें चेतना (Consciousness) है । किन्तु यह चेतना 'प्राण' और 'चेष्टा' के माध्यम से प्रकट होती है ।

निम्न मंत्र के चिन्तन में 'प्राण-चेष्टा-जीवन' का सुयोग प्रस्तुत हुआ है-

**'यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतोबभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदञ्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।''** (यजु. ३३-१३)

मंत्र को चिन्तन की सुविधा की दृष्टि से निम्न खण्डों में विभाजित कर लेते हैं ।

१) यः (परमेश्वरः) प्राणतः निमिषतः झगतः । जो परमेश्वर प्राणवाले, निमेष वाले, जगत् का

२) महित्वा एक इत् राजा बभूवः

(जो परमेश्वर अपनी महिमा के कारण इस प्राण वाले निमेष वाले संसार का निस्सन्देह एक राजा है ।

३) यः अस्य द्विपदः चातुष्पदः ईशे-जो परमेश्वर इस जगत् में द्विपद-चतुष्पद, जड़ चेतन सब पर शासन करता है (अपनी महिमा से)

४) कस्मै देवाय हविषा विधेम सुखस्वरूप सकल ऐश्वर्य के देने वाले परमात्मा की भक्ति अपनी सकल उत्तम सामाग्री अर्पित करके करे ।

अब प्रत्येक खण्ड पर व्याख्यात्म चिन्तन प्रस्तुत करते हैं :-

१) **यः प्राणतः निमिषतः जगतः** - जो प्राण वाले, निमेषोन्मेष वाले, आँख आदि से चेष्टा करने वाले संसार का राजा है ।

हमारा शरीर है तो माटी का पुतला ही- **'भस्मान्तं शरीरम्'** यह अन्त में मिट्टी में ही मिल जायेगा । यह मिट्टी का पुतला भी प्राणों का सम्पर्क पाते ही संसार की सर्वाधिक मूल्यवान् वस्तु बन जाता है । कल्पना कीजिए कहीं आग लग गई, वहां धन सम्पत्ति भी है और एक नन्हा मुन्ना भी है । शिशु छोटा है, जीयेगा या नहीं, कमाने वाला, सुयोग्य बनेगा भी या क्या ? किन्तु सारे हीरे जवाहारात एक ओर, नन्हा-मुन्ना प्रणी एक ओर । सारी अनिश्चितता के बावजूद, अनिश्चित जीवन, अनिश्चित योग्यता वाले प्राणी का, प्राण वाले का, प्राणतः का मूल्य कहीं अधिक है, अतुलनीय रूप से अधिक है । यह है महिमा प्राण की, अन्यथा शरीर तो है ही माटी का पुतला । प्राणों का सम्पर्क पाकर मिट्टी अमूल्यवान बन गई ।

नास्तिक सोचता है और मानता-विश्वास भी करता है-

**'माटी का तन माटी का मन,
क्षण भर जीवन, मेरा परिचय ।'**

नास्तिक के लिए न अध्यात्म है और न है प्रभु की कृपा जन्य आध्यात्मिक उपलब्धि । प्रभु भक्त का आध्यात्मिक दृष्टिकोण सारे चिन्तन की दिशा बदल देता है । हमारा शरीर है तो मिट्टी ही, और अन्त में इसकी परिणति भी मिट्टी ही है, किन्तु प्राण तत्त्व का स्पर्श होते ही यह अमूल्य, बहुमूल्य, मिट्टी का अन्य रूप बन जाती है । सड़ी गली मिट्टी गुलाब की कली, मिश्री की डली बन जाती है । मानव चोले का तो पूछना ही क्या ? अपनी मिट्टी की विशेषताओं पर मुग्ध होकर भक्त प्रभु भक्ति में मगन होकर अपनी मिट्टी की सराहना करने लगता है -

**'मेरी मिट्टी ! मैं बलि जाऊँ ।।
तुझे पात्र में परिणत पाऊँ ।
तूही मेरी चांदी सोना, आघातों से खिन्न न होना ।
रूप बनेगा सुघर सलोना, पहले पिण्ड बनाऊँ ।।
मेरी मिट्टी मैं बलि जाऊँ ।
चले पिता का चक्र नियम से, बैठ शिला पर तू शम दम से ।
उठे एक आकृति क्मर-क्मर से, भली भाँति मैं भाऊँ ।।
मेरी मिट्टी मै बलि जाऊँ ।
फिर भी तुझको तपना होगा, क्लेशों से न कलपना होगा ।
थों मङ्गल घट अपना होगा, भर धर घर घर आऊँ ।।
मेरी मिट्टी मैं बलि जाऊँ ।।'**

(श्री नैथिलीशरण गुप्त रचित)

प्राण विचित्र तत्त्व है । आत्मा के साथ जब प्राणका सम्पर्क प्रभु की महिमा से होता है तो आत्मा का, अमर आत्मा का जीवन आरम्भ होता है । जीवति, प्राणति, ये सारे प्रयोग सप्राण आत्मा के लिए होते है । निष्प्राण आत्मा अजर अमर हो सकता है । किन्तु जीवन तो तभी आता है जब प्रभु प्राणों के साथ आत्मा को जोड़ देते हैं ।

प्र पूर्वक अनु प्राणने शतृ प्रत्यय करने षष्ठी एक वचन में प्राणतः प्रयोग बनेगा । इसी प्रकार नि + मिष् + शतृ षष्ठी एकवचन में निमिषतः प्रयोग सिद्ध होगा । सो निमिषतः का सीधा अर्थ हुआ 'नेत्रादिना चेष्टतां कुर्वतः' । निमिषतः का सीधा सा अर्थ हुआ 'नेत्रादिना चेष्टतां कुर्वतः' । सो निमिषतः का अर्थ हुआ नेत्रादि ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों से चेष्टा करने वालों का ।

प्रणतः का अर्थ हुआ 'प्राण वालों का' और निमिषतः का अर्थ हुआ 'ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय' चेष्टा करने वालों का ।'

प्राणों के अभाव में सामान्य रूप से चेष्टाएं नहीं हो सकती । प्राणतः निमिषतः 'ब्राह्मण वशिष्ठ न्याय' जैसा लगता है । वशिष्ठ कहने से ब्राह्मण तो समझा ही जायगा । निमिषतः चेष्टां कुर्वतः कहने से प्राणतः तो समझा ही जायेगा ।

किन्तु इस मंत्र में प्राणतः का प्रयोग कुछ अधिक, शायद बहुत अधिक भाव को समेटे हुए है । ऊर्जा खनिज में भी पाई जाती है । मैं विज्ञान का विद्यार्थी नहीं हूँ । किन्तु ऊर्जा से संबंधित दो सूत्र प्रस्तुत करने का मन हो रहा है -

i) $E=MC^2$

ii) E h θ और $f=c/\theta$

हम सूत्रों में नहीं उलझना चाहते किन्तु चेष्टा, ऊर्जा की समस्या से सम्मुखीन होना होता है ।

ऋषि ने अर्थ करते हुए 'प्राणतः का प्राण वाले, निमिषतः का अप्राणि रूप जगत का' अर्थ करके चिन्तन के आयाम को अत्यधिक विस्तृत कर दिया है । क्या प्राणतः और निमिपतः का आयाम अप्राणि रूप जगत् ऊर्जा, प्रकाश, शब्दतरंग, चम्बकत्व, रेडियो धर्मिता आदि आदि को अपने में समेट रहा है ?

प्राण सूक्त के एक मंत्र पर विचार कीजिए-
'प्राणः प्रजा अनुवस्ते पिता पुत्रमिव प्रियम् । प्राणो हि सर्वस्येश्वरो यच्च प्राणति यच्च न ।।' अथर्व. ११-४-१०

अर्थात् - प्राण पिता है, पालक है, रक्षक है । सारी प्रजाएं (प्रर्षेण जायन्ते इति प्रजाः) जड़चेतन, प्राणी अप्राणी, सभी को पुत्र की तरह प्रिय है । प्राण सम्पूर्ण प्रजाओं का, सृष्टि का, ईश्वर है 'यच्च प्राणति यच्च न' जो प्राणाति अर्थात् श्वास लेता है और यच्च न प्राणति अर्थात् जो श्वास नहीं लेते जैसे खनिज जगत् । वनस्पतियों में श्वसन क्रिया, आक्सीजन, नाइट्रोजन का लेना छोड़ना, साधारण अनुभव है । प्रजनन भी है ही । प्रस्नोपनिषद् का भी एक श्लोक दृष्टव्य है -

'प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत् प्रतिष्ठितम् । मातेव पुत्रान रक्षस्व श्रीश्च प्रजां व विधेहि न इति ।।' २-१३।।

तीनों लोकों में पृथ्वी, द्यौ, अन्तरिक्षलोक में जो कुछ भी प्रतिष्ठित है अस्तित्व में है, वह सब प्राणके नियन्त्रण में है । हे प्राण ! जैसे माता अपने पुत्रों की रक्षा करती है, वैसे हमें श्री शोभा आभा कान्ति और प्रज्ञा, मेधा बुद्धि दो ।

प्राण और चेष्टा को ध्यान मे रखकर एक तालिका बनाने का प्रयास कर रहे हैं । (कुछ अपना, कुछ अन्यत्र से साभार) ।

अ) **खनिज जगत्**-अधिकतम जड़ता, अधिक तप तनस् के परमाणु, न्यूनतम सत्त्व और रजस के परमाणु, जड़ता, गतिहीनता (Inertia) न्यापचय, ठोस घनत्व में कालक्रम से शिथिलता और स्वरूप परिवर्तन ।

आ) **वनस्पति जगत्** - अधिकतम तमस्, जड़ता से मुक्ति, प्राण श्वसन का प्रारम्भ, प्जनन (या पुनरुत्पादन) रज शुक्र, स्थानीय उपकरण (गर्भ केसर-पराग केसर) जाति विभाग, अन्तर इकरियाएं, जन्म यौवन वार्धक्य (सस्यमिवर्त्यः पच्यते सस्यमिव जायते पुनः) ।

किसी किसी वनस्पति में ज्ञान कर्म इन्द्रियों का कुछ अधिक विकास, उदाहरणार्थ छुईमुई में स्पर्श, डसोरा में स्पर्श-रसना की उपलब्धि इत्यादि ।

ई) **पशुजगत्** - पर्याप्त तमस्+रजस्+ न्यूनतम सत्तव, प्राणन, श्वसन, संचलन, ज्ञान-कर्म, इन्द्रियां, काम-क्रोध आदि का सुस्पष्ट अभिज्ञान, न्यूनतम विवेक, संघ प्रवृत्ति, आनुवंशिकता की सहज उपलब्धि, शारीरिक अन्तर क्रियाओं का मानव से समता इत्यादि ।

उ) **मानव जगत्** - विद्या बुद्धि विवेक, भौतिक, मानसिक, आध्यात्मिक पक्षों का विकास, परिज्ञान, अन्नमय कोष, प्राणमय, मनोमय विज्ञान में आनन्द में कोषों की साधना का अवकाश, अवसर । पशु प्रवृत्ति और पशु भोगों से लगाकर ब्रह्मानन्द तक अनेक अवस्थाओं का विकास क्रम । एक एक कोषकी साधना, विकासके लिए ऋषियों की योजना और शिक्षा ।

उपनिषद् जैसे आध्यात्मिक चिन्तन में विभिन्न, उच्च से उच्चतर योनि लोकों का वर्णन उपलब्ध है । यथा १) मानव, २) गन्धर्व, ३) पितृ, ४) देव, ४) बृहस्पति, ६) प्रजापति, ७) ब्रह्म ।

हम इस वर्णन में अधिकार पूर्वक कुछ कहना नहीं चाहते । हां, इतना अवश्य कहना चाहते हैं कि यदि प्रवृत्ति पशु बभोगों में नियंत्रित हो गई और प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय कोषों की ओर प्रवृत्ति हो गई तो आनन्द की मात्रा और कालावधि, दोनों का विकास होना सम्भव सुलभ हो जायेगा ।

हम 'प्राणतः निमिषतः' प्राण और चेष्टा पर विचार कर रहे थे । छुईमुईकी न्यूनतम चेतन-चेष्टा से लगाकर कम्प्यूटर मानव (जा बीसो अंकों का गुणा क्षणों में लिखने में समर्थ) की विकसित बौद्धिक प्रचेष्टा हमारे ज्ञान में है । पूर्व जन्म की सञ्चित उपलब्धियां भी प्रत्यक्ष जानकारी में है -

आर्य समाज कलकत्ता के पुराने कार्यकर्ता बंसल जी के परिवार का अर्जुन नामक युवक ४५-४० वर्ष पूर्व समाज के सत्संग में आता था । थोड़ा असामान्य था । स्व. पं. श्री अयोध्या प्रसादजी पूछते 'अर्जुन ! अमुक तारीख, अमुकमहीना, अमुक सन् क्या दिन था ? प्रश्न समाप्त होते ही उसे स्फुरण सा होता और तुरन्त ही वह अत्यन्त सहजभाव से दिन का नाम बोल देता । हमने पचासों बार देखा था । पूर्व वैदिक बुद्धि संयोग की उपलब्धि के अतिरिक्त अन्य कोई व्याख्या हमें बुद्धिगम्य नहीं होती ।

प्राण तत्त्व क्या है ?- वायु तो है नहीं । वायु प्राणों का वाहन है । प्राण व्यष्टि तो है ही, समष्टि भी है । मनस् तत्त्व आदि की तरह ही प्राण भी व्यष्टि समष्टि दोनों है । अपनी प्रकृति की, प्रवृत्ति की, साधना की सरूपता से मनुष्य सत्त्व,रज, तम, युक्त प्राणों को ग्रहम करता है । हिमालय की उपत्यका, गंगा का तीर, शीतल समीर का वातावरण है । अध्यात्मिक साधक प्राणायाम द्वारा सात्विक प्राणों का संग्रह करेगा । पहलवान दण्डबैठक से राजसी और नीच पशु प्रवृत्ति से तामसी प्राणों को ग्रहण करेगा ।

आध्यातिमक साधना का आरम्भ - आजकल कई जगह की योग साधना पद्धतियों में साधना का आरम्भ ध्यान से किया जा रहा है । 'अकरणान् मन्द करणं श्रेयः' कुछ न करने से मन्द करना भी ठीक ही है । किन्तु ऋषियों के अनुभूत मार्ग में प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान का ही

क्रम प्रशस्त है। प्राणायाम से प्राणमय कोष, प्रत्याहार से मनोमय कोष, स्वाध्याय से विज्ञानमय कोष, धारणा-ध्यान समाधि से आनन्दमय कोष की साधना बुद्धिगम्य है। ईश्वर प्रणिधान से भी बहुत कुछ सम्भव है। किन्तु ईश्वर प्रणिधान स्वयं अपने में जन्मजन्मान्तर की साधना से सम्भव है।

२) **महित्वा एक इत् राजा बभूव** - हमारे सामने अनेक राजा और अनेक राजाओं का इतिहास उपस्थित है। कोई वंश परम्परा से राजा बनते हैं। कोई-कोई युद्ध करके, विजयी बनकर राजा बनते हैं। राजा बनकर कोई 'रामराज' का उदाहरम प्रस्तुत करते हैं। कोई नादिरशाही राज भी चलाते हैं। किन्तु अपनी महिमा से राजा हो और कौन राजव्यवस्था से महिमावान् हो, ऐसा राजा तो प्रजापति प्रभु हीहैं।

सृष्टि की रचना, पालन, प्रलय, सब प्रभु की ही महिमा है। एक प्राणी मनुष्य पर थोड़ा विचार करें। मनुष्य का शरीर अद्‌भुत संयंत्र है। जीवन-प्राणन, श्वसन, रक्त संचरण, भोजन, पाचन, सब अद्‌भुत है। फिर इनका ऊर्जा शक्ति आदि से संबंध आश्चर्यजनक है। सिर में पीड़ा हुई तो यह दवा, कान दर्द की दूसरी दवा। दवाइयां मुखमार्ग से पाचन संयन्त्र के किसी संचार विभाग से अधिक सुन्दर-समर्थ-परिपूर्ण व्यवस्था, प्रभु की ही प्रधानता है, प्रभु की ही महिमा है।

मनुष्य केवल भौतिक (Physical) संयन्त्र नहीं है। यह भावनात्मक (Psychological), बौद्धिक (Intellectual) और आध्यात्मिक (spiritual) प्राणी है।

मानव=भौतिक+भावनात्मक+बौद्धिक+आध्यातिमक है।

इन सबका आपस में सामञ्जस्य, समन्वय भी परिपूर्ण है। एक भाषा को लें। उच्चारण संयन्त्र, शब्द, उनके अर्थ, भावानों से शब्दों का मेल, फिर शब्द प्रेरित भावना का मन और रक्त संचार समेत अनेक संयन्त्रों पर प्रभाव = सब उसी विधाता के विधान की ही तो महिमा है -

'कोई न पार पावै महिमा अपार तेरी।
हर गुल से आ रही है खुशबू बहार तेरी॥'
X X X X

'सब जग के आधार! नमस्कार, नमस्कार।
सूरज और चांद में है तेरा ही उजाला॥
तूने पहनरखी है सितारों की माला,
महिमा अपरम्पार-मनमस्कार, नमस्कार॥'
X X X X
शब्द करती नदी बह रही है, सनसनाती हवा चल रही है।
कैसी उन्मादिनी यह महादेव की मधुर माया,
हमने उस ईश में मन लगाया।'

प्रभु की महमिा अपार है और अपनी महिमा के कारण ही प्रभु संसार के पालक व्यवस्थापक राजा है।

राजा की महमिा शासन चलाने में, सुव्यवस्था करने में है। इससे भी अधिक महिमा का सम्पादन स्वार्थ त्याग कर पालन करने में है। यह तो परिवार और समाज की व्यवस्था में भी सुस्पष्ट है। परिवार में कमाने वाले, परिवारका पालन पोषण करने वाले सदस्य की महमिा अधिक होती है। एक श्लोक के दो चरणों पर विचार कीजिए-
'र्स्वस्य द्वे समुतिकुमती सम्पदापत्ति हेतु।
एकोगोत्रे प्रभवति पुमान् यः कुटुम्बं बिभर्ति।'

अर्थात् सभी मनुष्यों के पास सुमति और कुमति और कुमति दो होते ही हैं। सुमति से सम्पत्ति सुख साधन सुविधा प्रतिष्ठा आदि मिलते हैं और कुमति से आपत्ति-विपत्ति बदनामी आदि मिलते हैं। परिवार में वर्ग-समुदाय-समाज में उस व्यक्ति का प्रभाव बढ़ जाता है। उसकी महिमा अधिक होती है जो सबका पालन करता है।

मनुष्य कितना भी त्यागी हो, कितना भीतपस्वी हो, उसे अपने योग क्षेम के लिए कुछ न कुछ भोजन वस्त्र आवास तो चाहिए ही चाहिए। किन्तु परमेश्वर अत्यन्त सुन्दर, सम्पन्न, धनधान्य से परिपूर्ण संसार बनाता है। सुन्दर वन, उपवन, नदी, पहाड़, झरने झील, जल, पवन, फल-फूल आदि आदि। किन्तु स्वयं एक कण का भी उपभोग नहीं करता। वह तो निर्लेप है। सवकुछ बनाकर जीवों को प्रसाद की तरह अर्पित कर देता है। सब कुछ बनाकर जीवों को प्रसाद कीतरह अर्पित कर देता है। सर्वस्व त्यागी है तभी सुखस्वरूप है। जहां त्याग, वहां, सुख, जहां भोग वहां रोग-दुःख बन्धन। प्रभु परोपकारमय हैं तभी तो आनन्दस्वरूप हैं। स्वार्थ के कारण दुःख होता है। परमार्थ के कारण आनन्द होता है। यह विश्वपति की महमिा है।

३) **य ईशे अस्य द्विपदः चतुष्पद-** प्रभु इस संसार के द्विपाद, चतुष्पाद, जड़चेतन, पशुपक्षी मनुष्य आदि सब पर शासन करते हैं। संस्कृत पाठ है 'इश ऐश्वर्ये' अंग्रेजी व्याकारण 'ईश to govern' लिखते हैं। अपने अपने हिसाब से दोनों पर चिन्तन करते हैं।

प्रभु ऐश्वर्य के दाता हैं। ऐश्वर्य ईश्वरत्व-ईश्वरभाव को कहते है। सांसारिक दृष्टि से ऐश्वर्य के साधनों में प्रमुख हैं-शरीरबल धन, विद्या आदि। इन सबका दाता परमेश्वर है, मनुष्य तो ग्रहीता, ग्रहण करने वाला है। प्रभु ने ऐश्वर्य प्राप्ति का मार्ग दिखला दिया। आचार-विचार, संध्या, सदाचार, व्यायाम ब्रह्मचर्य सभी काया-सम्पत्ति, शारीरिक ऐश्वर्य के साधन हैं। इन मार्गों पर चलकर मनुष्य ऐश्वर्य पा लेता है। ऐसी ही स्थिति विद्या धन आदि की भी है। सभी ऐश्वर्य, चाहे विद्या हो, या अन्य कुछ, सभी प्रभु की व्यवस्था में सन्निहित हैं। मनुष्य सन्मार्ग पर चलता है और प्रभु उसकी झोली में ऐश्वर्य डालदेते हैं। किन्तु झोली तो ठीक रखनी होगी। सन्मार्ग सदाचार, नियम आदि ही तो झोली को संभालना ठीक रखना है।

प्रभु शासन भी करते हैं। सबको उनके कर्मोका फल भगवन् देते है। एक प्यारे गीत के एक दो पद देखिए-
'मेरे दाता के दरबार में, सब लोगो का खाता।
जैसी कोई करनी करता, वैसा ही फल पाता॥
नहीं चले भाई उसके घर रिश्वत और चालाकी।
उसकी लेन देन की बन्दे, रीति बड़ीहै बांकी।
पुण्य का बेड़ा पार करे वह, पाप की नाम डुबाता॥
कड़े कड़े कानून प्रभु के, बड़ी कड़ी मर्यादा।
किसी को कौड़ी कम नहीं देता, न ही किसी को ज्यादा।
इसीलिए तो दुनियाका वह, जगत पिता कहलाता॥'

वह जगत् पिता है । सबका पालन करता है । किन्तु प्रभु न्यायकारी है । पुण्यके बदले सुख और पाप के बदले दुःख मिलता ही है । 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभा शुभम्' - शुभ और अशुभकर्मोंका फल तो अवश्य ही भोगना पड़ता है ।

परमैश्वर्यवान् प्रभु पालक भीहैं और शासक भी । जन्म से मृत्यु पर्यन्त पालन की सारी व्यवस्था प्रभुकरते हैं । विलास की निरर्थक पाप प्रेरक वस्तुएं महंगी हैं, किन्तु जीवन की आवश्यक अमूल्य वस्तुएं बिना मूल्य के प्रभु ने दे रखी है । 'प्राण' सबसे अधिक आवश्यक है । प्राणों के बिना तो मनुष्य कुछ क्षण भी कठिनाई से जीवन धारण कर सकेगा । वे प्राण ग्रहण करने की क्षमता खो बैठे, यह अलग बात है । प्रभु नेतो भरपूर प्राण दिये हैं । प्रभु पालक हैं ।

जगदीश्वर शासक भी है । पापों कादण्ड भी देते हैं । कई बार मनुष्य अपनी दार्शनिक सोच को स्वार्थ से बंध देता है । उसकी तर्कबुद्धि कुण्ठित हो जाती है, अथवा, मनुष्य अपनी तर्क बुद्धि को कुण्ठित कर लेता है । भक्तों ने पाप क्षमा के अनेक रास्ते निकाल लिए हैं । कहते हैं -

'गंगागंगोति यो ब्रूयात् योजना शतैरपि ।
मुच्यते सर्व पापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ।।'

सैकड़ों योजनों से गंगा-गंगा बोलने से ही पापों से मुक्त होकर विष्णुलोक बैकुण्ठ को चला जाता है ।

ऐसे दूर्जनों श्लोकपद भरे पड़े हैं जो पाप को क्षमा कर देने की सिफारिश करते रहते हैं । किन्तु शास्त्रीय स्थिति पाप क्षमा की नहीं है ।

श्रीकृष्ण की सम्मति -श्रीमद् भगवद् गीता में एक प्रसंग है कि परमेश्वर किसी भी कर्त्ता का पाप या पुण्य नहीं लेते । मनुष्य अज्ञान से मोहित हो जाता है तो ऐसा सोचने लगता है कि प्रभु हमारा पाप हमसे ले लेंगे और पुण्य हमें प्रदान कर देंगे । ईश्वर की प्रार्थना उपासना से पाप नष्ट नहीं होते । निम्नलिखित श्लोक पर विचार कीजिए -

'नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः ।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ।।'
गीता ५-१५

अर्थात्-विभु (परमेश्वर) न किसी का पाप ग्रहण करते हैं और न किसी का सुकृत-पुण्य ही लेते हैं । जब मनुष्यका ज्ञान अज्ञान से आच्छादित्त होजाता है, ज्ञान पर अज्ञान का परदा पड़ जाता है, तब वह मोह में पड़कर ऐसा सोचता है कि भगवान मेरा पाप क्षमा कर देंगे या मुझे पुण्य दे देंगे । प्रभु न्यायकारी हैं । जीव को अपने कर्मों के अनुसार न्याय मिलता है ।

प्रभु ऐश्वर्यशाली हैं । वे मनुष्य को ऐश्वर्य पाने का अवसर भीदेते हैं । यह मनुष्य का अपना काम है कि वह ऐश्वर्य प्राप्त करले या उसो छोड़ दे ।

ऐश्वर्य धन का हो या बल का फिर विद्या का भी ऐश्वर्य हो, यह ऐश्वर्य तो दान करने से ही मिलता है, संचय करने से नहीं-

'यद् ददाति यदश्नाति, तदेव धनिनोधनम् ।
अन्ये मृतस्य क्रीड़न्ति, दारैरपि धनैरपि ।।'

जो किसी को दे दिया, जिस धनबल और विद्या से किसी की सेवा-सहायता कर दी, वह अपने लिए संचित हो गया, प्रभु के बैंक में जमा हो गया । धनी का धन तो वही है जो अपने या अन्य के कार्य आ गया । अन्यथा धनीकी मृत्यु के पश्चात् दूसरे लोग उसके धन के साथ खेल खेलते है-खिलवाड़ करते हैं ।

प्रभु के न्याय का आश्रय ही परम सहारा है ।

४) **कस्मै देवाय हविषा विधेम** - सकल ऐश्वर्यके देने वाले, सुख-स्वरूप परमेश्वर के लिए अपनी सकल उत्तम सामग्री अर्पित करके भक्ति करें ।

प्रायः देखा जाता है कि यज्ञ याग, दान-दक्षिणा इत्यादि में दी जाने वाली, अर्पित की जाने वाली वस्तुएं घटिया स्तर की रहती हैं । बाजार में पूजा के बर्तन, ब्राह्मणों को दिये जाने वाले वस्त्र पात्र अजीव प्रकारके होते हैं । पौराणिकों मेंतो कहावत ही है 'दान की बछिया का दांत नहीं देखते' । देने वाला खाना पूर्ति करता है और कई ब्राह्मण-महापात्र-मन्दिरों के पुजारी आदि वैसे का वैसा ही दुकानदारको बेज देते हैं । दुकानदार फिर किसी दाता को बेच देता है । कहते भी है 'भाव के भूखे हैं भगवान् ।' ऐसा जान पड़ता है कि भगवान् उनके भावों की चालाकी, दाता की कंजूसी नहीं समझते ।

कई अवसरों पर तीर्थों में दुग्धदान की प्रथा है । दान दाता अपना दूध कम लाता है । प्रायः दुग्धदान में पंडिताई करने वाला ब्राह्मण हीदूध का लोटा घर से भरकर ले आता है । भक्तगण दुग्धदान करते हैं । ब्राह्मण की दक्षिणा और दूध का दान दोनों ब्राह्मणों को मिलता है । दुग्धदान से लोटा जितना खाली होता जाताहै उतना हीपानी मिलाकर दुग्धदान कराने वाला लोटा को भरता रहता है । घंटों, शायद सारे दिन दुग्धदान ही होता रहता है और पुजारी का लोटा भी भरा का भरा ही रहता है ।

कई बार यज्ञों में टीने की पेन्दी का घी रख लेते हैं । अच्छा घी खाने के लिए और तलछट लाल, मटमैला, काला घी हवन के लिए । यह सब हमारी हीन मनोवृति या भोलेपन का फल है । ऋषि केसर कस्तूरी सुगन्ध युक्त अच्छे शुद्ध घी की आहुतियाँ देने को लिखते हैं ।कस्तूरी तो अब दुर्लभ है और केसर भीबुहत महंगी ।कम से कम शुद्ध गोघृत का तो हम प्रयोग करें । कई बार अति बाबू टाइप लोग वनस्पति तेलों को घी समझते हैं । यज्ञ के लिए तो शुद्ध गोघृत ही चाहिए । कम से कम पशुदुग्ध से बना हुआ घी तो हो ही ।

स्वामी दयानन्दजी ने देवाय का अर्थ सकल ऐश्वर्य का देने वाला परमेश्वर किया है । 'देवो दानात्' देव दान से ही देव बनते हैं । परमेश्वर तो परमदाता, महादेव, महान् दाता है । वस्तुतः हमारे पास जो कुछ भी है सब को परमेश्वर ने ही हमें दिया है । किसी में विद्या है, किसी में वक्तृत्व है, किसी में कलाकारिता है, कहीं संगीत, कहीं वाद्य, कहीं तकनीकी कला, जो कुछ भी हममें विशिष्टता, विशेषता है, वह सब प्रभु की विभूति है । गीता का एक मार्मिक श्लोक देखिए -

'यद् यद् विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।

तत् तदेवागच्छ त्वं मम तेजोंश सम्भवम् ।।'

गीता. १०-४२

संसार में जो कुछ भी विभूतियों वाला, विशेषता लिए श्री सम्पन्न, ऊर्जस्विता लिए है, वे सारी विभूतियां, विशेषताएं, श्री सम्पन्नता, ऊर्जस्विता, सबकुछ प्रभु के तेज का ही अंश है । प्रभु परमेश्व से ही ये विभूतियां, ये गुणहमें मिलते हैं, हममें उद्भुतो होते हैं -

'मुझमें मेरा कुछ नहीं, जो कुछ है सब तोर ।
तेरा तुझ को अर्पण, क्या लागत है मोर ।।'

इसमें 'क्या लागत है मोर' यह अंश अर्पण को हल्का बना दे रहा है । बस, अर्पण ही पर्याप्त है-

'त्वदीयं वस्तु हे नाथ ! तुभ्यमेव समर्पये ।'

मनुष्य की उत्तम सामग्री क्या है ? हमारे जीवन की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि ही हमारी उत्तम सामग्री है । हम जो कुछ भी अपनी उपलब्धि, अपने जीवन की सफलता समझते हों, उसे प्रभु की प्रजा के क्लयाणार्थ अर्पित करनेकी चेष्टाकरते रहें ।

अर्पण की मानसिकता आधे मन से नहीं होती पीरे मन से (Whole hearted) अर्पण ही वास्तविक भक्ति होती है । स्वामी दयानन्दकी बहुत लम्बी समाधि लगने लगी थी । किन्तु वे ब्रह्मानन्द के सुख को त्यागकर भी संसार के कल्याण और देदविद्या के प्रचार में लग गये । ऋषि के जीवन की श्रेष्ठ उपलब्धि को उन्होंने प्रभु की प्रजा को अर्पित कर दिया । वस्तुतः जब अपने प्रभु के साथ भक्तकी एकात्मकता हो जाती है तो सम्पूर्ण समर्पणकी ब्रात भी तो नहीं रह जाती, उस समय की भावना को निम्न मन्त्रांश में देखिये-

'त्वमस्माकम् तवस्मसि' ऋ० ८-१२-३२७

प्रभु आप हमारे हैं और हम आपके हैं ।

इस भावना के जाग जाने पर भक्त अपने अहम् से बहुत दूर तक मुक्त हो जाता है । फिर जो कुछ भी है वह सब भगवान् का ही है और मैं, मेरी योग्यता, उपलब्धि सब उसी प्रभा का दान है, सब उसी को अर्पित हो, यही उसकी भक्ति हैं ।

मांसभक्षण के पक्ष में दिये जानेवाले कतिपय वेदमन्त्रों पर विचार

-आचार्य रामनाथ वेदालङ्कार

'सरिता' १९८० के अप्रैल (प्रथम) अङ्क में 'वैदिक युग में मांसभक्षण' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित हुआ था । इसमें लेखक ने मांसाहार के प्रमाणस्वरूप पाँच वेदमन्त्र उपस्थित किये थे । इनके अतिरिक्त मनुस्मृति, गौतमधर्मसूत्र, आपस्तम्बधर्मसूत्र, बृहदारण्य-कोपनिषद्, याज्ञवल्क्यस्मृति और बाल्मीकि-रामायण के भी कुछ स्थल देकर अपने पक्ष को सिद्ध करने का प्रयास किया गया था । इस सम्बन्ध में हमारा वक्तव्य यह है कि जहाँ तक ऋग्, यजुः, साम, अथर्व इन चार वैदिक संहिताओं का प्रश्न है, उनसे मांसभक्षण का समर्थन नहीं होता है । न उनमें देवताओं को मांस खिलाने का विधान है, न मनुष्यों द्वारा मांस खाने का । मांसभक्षण के पक्ष में जो वैदिक प्रमाण दिये जाते हैं, वे वस्तुतः प्रमाणाभास ही हैं । स्वामी दयानन्द ने वेदों को ही स्वतः प्रमाण माना है । अन्य ग्रन्थ वहीं तक प्रमाण है, जहाँ तक वे वेदानुकूल हैं । वेदविरुद्ध होनेपर वे प्रमाणरूप में मान्य नहीं हैं ।

हम यह कहना नहीं चाहते कि भारत में कभी कोई मांसभक्षक रहे ही नहीं । अन्य कई व्यसनों के समान मांसभक्षण का व्यसन भी कभी प्रबलरूप में और कभी सामान्यरूप में प्रचलित रहा है, परन्तु उसे शास्त्रकार निन्दा की दृष्टि से ही देखते हैं । कहीं-कहीं धर्मसूत्रकारों ने यह भी कह दिया है कि यदि मांस खाने से रुक नहीं सकते तो कम से कम अपवित्र पशु-पक्षियों का मांस तो न खाओ, परन्तु शास्त्रों की दृष्टि में आदर्श यही है कि मांस का सेवन सर्वथा न किया जाए । मनुस्मृति ने तो स्पष्ट कहा है कि भले ही कुछ लोग यह विचार रखते हों कि मांसभक्षण, मद्यपान आदि में कोई दोष नहीं है, परन्तु वस्तुतः इनसे निवृत्त रहना ही महाफलदायक होता है -

न मांसभक्षणे दोषो न मद्ये न च मैथुने ।
प्रवृत्तिरेषा भूतानां निवृत्तिस्तु महाफला ।।

-मनु. ५.५६

इस निर्देश के होते हुए मनुस्मृति में जो भक्ष्याभक्ष्य (किन्हीं विशेष जन्तुओं के खाने या न खाने) का प्रकरण है, उसे पूर्वापरविरुद्ध होने से प्रक्षिप्त ही मानना चाहिए । अतएव स्वामी दयानन्द ने प्रक्षिप्त-श्लोकरहित मनुस्मृति को ही प्रामाणिक माना है ।

अब रह जाती है बात वेदों की । सो मांसाहार के प्रमाण में सरिता के लेखक ने जो वेदमन्त्र दिए है, उनकी क्रमशः परीक्षा करते हैं ।

प्रथम मन्त्र

अवर्त्या शुन आन्त्राणि पेचे न देवेषु विविदे मर्डितारम् ।
अपश्यं जायाममहीयमानामधा मे श्येनो मध्यावाजभार ।। -ऋ. ४.१८.१३

सरिता के लेखक के अनुसार इस मन्त्र में ऋषि वामदेव अपना अनुभव बता रहे हैं । 'चूँकि मैंने अन्य देवों में से किसी को भी सुखदायक न पाया, इसलिए मैंने लाचार होकर कुत्ते की आँतें पकाई । मैंने अपनी पत्नी को अपमानित होते भी देखा । तब इन्द्र बाज पक्षीके समान उड़कर मेरे लिए मधुर सोमरस ले आया ।'

अब यहाँ विचारणीय है कि वामदेव को यदि ऐतिहासिक व्यक्ति ही मान लें तो विपत्ति या संकट (अवर्ति) में पड़े होनेपर उसे कुत्ते की आँत पकाना क्यों आवश्यक हो गया ? क्या ऐसी विपत्ति आ गयी थी कि कुत्ते के अतिरिक्त कोई भी पशु, पक्षी, घास-पात, कन्द-मूल आदि नहीं बचा था । फिर वामदेव के अन्य साथी भी तो होंगे, वे कैसे जीवित रहे ? यदि वे किसी अन्य भोजन से जीवित रह सकते थे, तो वामदेव को भी वह भोजन सुलभ क्यों न हुआ ? ये

सव बातें इस ओर संकेत करती है कि मन्त्रगत 'शुनः आन्त्राणि' (कुत्ते की आँतों) का कुछ अन्य ही रहस्य है ।

एक अन्य बात यह द्रष्टव्य है कि मन्त्र में दो प्राणियों के नाम आये हैं- 'श्येन' (बाज) और 'श्वा' (कुत्ता) । मन्त्र में उलझन इस कारण उत्पन्न हो गयी है कि श्येन का अर्थ तो सायण ने और उसके अनुगामी सरिता के लेखक ने बाज न लेकर बाज के समान शीघ्रगामी इन्द्र ले लिया और श्वा का अर्थ कुत्ता ही रहने दिया । तो मन्त्र का वास्तविक रहस्य क्या है ? 'वाम' का अर्थ है सुन्दर या प्रशंसनीय और 'देव' का अर्थ है तेजस्वी । सुन्दर, प्रशस्त, तेजोमय शरीरवाला मनुष्य वामदेव है । कभी दुर्भिक्ष पड़ जानेपर शाक, सब्जी, अन्न, फल आदि उत्पन्न नहीं हुए हैं, जिनके पास कुछ अन्न सञ्चित है भी वे वामदेव-सदृश गरीबों की सहायता नहीं कर रहे हैं, क्योंकि दूसरों की सहायता में अन्न समाप्त हो गया तो अपने प्राण सङ्कट में पड़ जाएँगे । अब वामदेव बेचारा क्या करे ? उसकी पत्नी भी इस विपत्ति में शोभाहीन हो गयी है । वह 'श्वा' की आँतों को पकाकर खा लेता है, पर 'श्वा' से कुत्ता अभिप्रेत न होकर अपामार्ग या चिरचिटा अभिप्रेत है । अपामार्ग को पर काँटे-काँटे से खड़े रहते हैं, जो पास जानेवाले मनुष्य के कुक्कुर के दाँत है, जिनसे वह काटता है । अपामार्ग की काँटोंवाली से सुधा नहीं सताती । अथर्ववेद में इस अपामार्ग को भूख-प्यास का मारनेवाला कहा है -

क्षुधामारं तृष्णामारम् अगोताम् अनपत्यताम् ।
अपामार्ग त्वया वयं सर्वं तदपमृज्महे ॥

-अथर्व. ४.२७.६

इस दृष्टि से देखें तो वामदेव के उक्त मन्त्र का अर्थ इस प्रकार होगा-मैंने (अवर्त्या) दुर्भिक्षरूप विपत्ति के कारण, क्षुधानिवृत्ति के लिए (शुनः आन्त्राणि) अपामार्ग की बीजोंवाली शाखाओं को (पेचे) पकाया, पकाकर खाया, क्योंकि उस दुभिक्ष-काल में (देवेषु) सज्जनों में किसी को भी (मर्डितारम्) सुखदाता एवं सहायक (न विविदे) मैंने नहीं पाया । (जायाम्) अपनी पत्नी को भी मैंने दुर्भिक्ष के कारण (अमहीयमानाम्) अशोभमान अवस्था को प्राप्त (अपश्यम्) देखा, किन्तु यह, विपत्ति की अवस्था सदा नहीं रही, (अथा) अन्ततोगत्वा (श्येनः) शंसनीय गतिवाला वायु, पर्जन्य और सूर्य (मे) मेरे लिए (मधु) वर्षाजल (आजभार) ले आया । प्रचुर वृष्टि से दुर्भिक्ष का सङ्कट समाप्त हुआ ।

अध्यात्म में वामदेव जीवात्मा है, क्योंकि वह स्वरूप से सुन्दर, प्रशस्त, निर्मल और तेजस्वी है । वह माता के गर्भ में आकर शरीर धारण करता है । बुद्धि उसकी पत्नी है । कभी आत्मारूप वामदेव बुद्धि, मन, प्राण, इन्द्रियों आदि सहित दुर्गुणों एवं व्याधियों पर विजय पाता हुआ राजा के समान विराजमान होता है । परन्तु मन्त्र में जिस दशा का वर्ण है, वह उसकी दारिद्र्योपहत दशा है । वह काम, क्रोध आदि के वशीभूत होने से विपद्ग्रस्त हो गया है और कुत्ते की आँतें पकाने लगा है, अर्थात् कुत्ते जैसा निन्दित आचरण करने लगा है । निरुक्त में कहा है कि 'श्वा' 'काक' आदि शब्द निन्दार्थक होते हैं- **श्वा काक इति कुत्सायाम्** (निरु. ३.१८) । आन्त्र का अर्थ है आचरण, कार्य या व्यवहार (अत सातत्यगमने) । पच धातु यहाँ करणार्थक है । आत्मा की जाया बुद्धि भी अशोभमान हो गयी है । इन्द्रिय, मन आदि देवों में से किसी को भी वह अपना सुखप्रदाता नहीं पा रहा है । परन्तु अन्त में 'श्येन' प्रभु की कृपा होती है । 'श्येन' का अर्थ है, शंसनीय गतिवाला सर्वव्यापक परमात्मा । वह उस दुर्गति-प्राप्त आत्मा के लिए मधु ले आता है । मधु है सफलता, विजय, अमरत्व, दिव्य आनन्द ।

अधिदैवत पक्ष में चन्द्रमा वामदेव है, जो कि सौन्दर्य का मूर्तरूप है । आकाशीय रोहिणी तारा उसकी पत्नी है । जब आकाश में चन्द्रमा रोहिणी-शकट का भेदन करता है, तब अपूर्व शोभा होती है । परन्तु चन्द्रमा सदा ही परिपूर्ण नहीं रहता, न ही रोहिणी-योग की अपूर्व छटा सदा रहती है । मन्त्र का वामदेव कृश कलाओं वाला दुर्गति-प्राप्त चन्द्रमा है । वह स्वयं भी दरिद्र हो गया है और उसकी जाया रोहिणी भी दरिद्र हो गयी है । आकाश में एक 'श्वान' नक्षत्र-पुञ्ज है, जिसे अंग्रेजी में 'डॉग स्टार' या 'कैनिस मैजर' कहते हैं । उधर चन्द्रमा और रोहिणी आभारहित हो रहे हैं और इधर 'श्वान' नक्षत्र-पुञ्ज की आँतें चमक रही हैं । मानो चन्द्रमा उन आँतोंको पका रहा है । पर चन्द्रमा की क्षीणकाय अवस्था शीघ्र ही दूर हो जाती है । 'श्येन' उसे मधु प्रदान कर देता है । 'श्येन' है सूर्य, जिसके प्रकाशरूप मधु को पुनः पाकर चन्द्रमा पुनः परिपूर्ण और प्रफुल्ल हो जाता है ।

द्वितीय मन्त्र

यदीदहं युधये संनयान्यदेवयून् तन्वा शूशुजानान् ।
अमा ते तुम्रं वृषभं पचानि तीव्रं सुतं पञ्चदशं निषिञ्चम् ॥ -ऋ. १०.२७.२

सायण ने इसे इन्द्र के पुत्र वसुक्र की उक्ति माना है और व्याख्या की है कि वसुक्र इन्द्र को कहता है कि मैं तेरे लिए मोटे-ताजे बैल को पकाऊगा-**तुम्रं प्रेरकं बलिनं पीवानमित्यर्थः वृषभं सेचनसमर्थं पुंपशुं पचानि** । इसी का अनुसरण करते हुए सरिता के लेखक ने लिखा है कि वसुक्र ऋषि का कथन है कि 'जब मैं देवता-विरोधी शत्रुओं पर अपने साथियों सहित आक्रमण करूँगा, तब मै तुम्हारे लिए पुष्ट बैल पकाऊँगा और सोमरस निचोडूँगा ।' पर वस्तुतः प्रथम तथा अगले मन्त्रों के समान इसे इन्द्र की उक्ति मानना ही अधिक संगत है । इन्द्र कहता है-

(यदि इत् अहम्) यदि निश्चय ही मैं (अदेवयून्) देवों की हितेच्छा न करनेवाले, (तन्वा शूशुजानान्) शरीर से परिपुष्ट हुए शत्रुओं को (युधये) युद्ध के लिए (संनयानि) रणभूमि में लाता हूँ, तो (अमा) साथ ही, हे

स्तोता, (ते) तेरे लिए (तुम्रं वृषभं) स्थूल वृषभ को (पचानि) पकाता हूँ तथा उसमें (पञ्चदशम्) पन्द्रहवाँ (तीव्रं सुतं) तीव्र अभिषुत रस (निषिञ्चम्) निषिक्त कर देता हूँ ।

अधिदैवत पक्ष में ये शत्रु जिनसे इन्द्र युद्ध करता है वृत्र या मेघ हैं, जिन्हें युद्ध में पराजित कर वह भूमि पर बरसा देता है । वृत्रों के साथ इन्द्र का युद्ध प्रसिद्ध ही है । अपना दूसरा कार्य इन्द्र ने जो यहाँ वर्णित किया है, 'वृषभ को पकाना' है । प्रश्न यह है कि यहाँ सायण के समान वृषभ को पकाने का अर्थ बैल पशु को पकाना ही गृहीत किया जाए, अथवा इसे पहेली मानकर रहस्यार्थ का उद्घाटन करने का प्रयत्न किया जाए । विचार करने पर ज्ञात होता है कि वस्तुतः यह एक पहेली ही है । जिस सूक्त का यह मन्त्र है, वह ऋग्वेद में प्रहेलिकात्मक सूक्तों मे से एक है तथा इसके अन्य कई मन्त्र भी पहेली-रूप ही हैं । यहाँ वृषभ का अभिप्राय सोम (चन्द्रमा या सोमबल्ली) है । सायण ने भी ऋग्वेद में अनेक मन्त्रों में वृषभ का अर्थ सोम लिया है । नवम मण्डल में ग्यारह बार एकवचनान्त वृषभ माना है । चन्द्रमा को पकाने या परिपक्व करने का अभिप्राय उसे परिपूर्ण करना है । कृष्णपक्ष में क्षीण हुए चन्द्रमा को इन्द्र पुनः परिपक्व कर देता है । जब वह एक-एक कला बढ़ते हुए चतुर्दशी के चाँद तक पहुँच जाता है, तब उसमें पन्द्रहवाँ रस या पन्द्रहवीं कला भी निषिक्त कर देता है और वह पूर्णिमा का परिपूर्ण चाँद हो जाता है ।

सोमबल्ली का अर्थ लेनेपर भी ऐसी ही व्याख्या होगी, क्योंकि उसका भी चन्द्रमा से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है और वह भी चन्द्रमा के क्षय के साथ क्षीण तथा उसकी परिपूर्णता के साथ परिपूर्ण होती है ।

तृतीय मन्त्र

एतद् वा उ स्वादीयो यदधिगवं क्षीरं वा मांसं वा, तदेव नाश्नीयात् ।

-अथर्व ९.६.३९

सरिता के लेखक ने इसका अर्थ दिया है- 'यह जो गौ का दूध व मांस है, वह अधिक स्वादु होता है, उसे अतिथ से पूर्व न खाए ।' फिर टिप्पणी की है 'यदि लोग मांस न खाते थे तो उन्हें उसके रसीले होने का ज्ञान कैसे हो गया ?' फिर लिखा है- 'इसके बाद के तीन मन्त्रों (अथर्व. ९.६.४०-४२) में कहा गया है कि जो मनुष्य अतिथि के लिए मन्त्रपाठपूर्वक जल से सींच कर दूध, घी व मधु लाता है, उसे तो विभिन्न यज्ञ करने का फल मिलता है, किन्तु जो मांस का उपसेचन कर अतिथि को पेश करता है, उसे द्वादशाह (बारह दिनों में समाप्त होनेवाले) यज्ञ का फल प्राप्त होता है ।'

इस सम्बन्ध में द्रष्टव्य यह है कि वैदिक दृष्टि में गाय सर्वथा अवध्य और पूज्य है । यजुर्वेद ८.४३ में गाय को इडा, रन्ति, काम्या, चन्द्रा, अदिति, सरस्वती, मही, विश्रुति और अघ्न्या नामों से स्मरण किया गया है । इन नामों के क्रमशः अर्थ होते हैं, पूजनीय, आनन्दित रहनेवाली, चाहने योग्य, आह्लाददायिनी, अखण्डनीया, दुग्धवती, श्लाध्या, गुणवती और न मारी जाने योग्य । गौ के अघ्न्या और अदिति नाम स्पष्ट ही उसकी अवध्यता को सूचित करते हैं । ऋ ८.१०१.१५ में तो स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि इस बेचारी निर्दोष गाय को मारो मत- **मा गाम् अनागाम् अदितिं वधिष्ट ।** इसी मन्त्र में उसे अमृत की नाभि कहा गया है, क्योंकि वह दुग्धामृत को देती है । उसे मांस की नाभि नहीं कहा गया । गौ की अहन्तव्यता और पूज्यता के शतशः प्रमाण वेदों में विद्यमान हैं । ऐसा होते हुए यह कल्पना में भी लाना अपराध है कि वेद अतिथि को गो-मांस खिलाने का विधान करेगा ।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि जहाँ वेदों में मनुष्य के भोज्य पदार्थ परिगणित हुए हैं, वहाँ मांस का नाम नहीं है । यजु. १८.९ और १२ में ऊर्ज्, पयस्, रस, घृत, मधु, शाक-सब्जियाँ, व्रीहि, यव, माष, तिल, मुद्ग, खल्व, प्रियङ्गु, अणु, श्यामाक, नीवार, गोधूम और मसूर का नाम आया है, मांस का नहीं । अथर्व. ६.१४०.२ में दाँतों को कहा गया है कि तुम व्रीहि, यव, माष और तिल खाओ, यही तुम्हारे लिए भाग रखा गया है । अतः प्रस्तुत प्रसङ्ग में अतिथि को गोमांस खिलाना निश्चय ही अभिप्रेत नहीं हो सकता । प्रस्तुत प्रसङ्ग से अगले ही सूक्त में गौ की महिमा में यह कहा गया है कि गौ में सब देवताओं का निवास होता है, अतः अकेली गौ की सेवा से सब देवों की सेवा हो जाती है । ऐसी महमामयी गौ का मांस क्या वेद अतिथि को पेश करने के लिए कहेगा ?

तो फिर प्रस्तुत प्रसङ्ग में मांस से क्या अभिप्रेत समझा जाए ? वस्तुतः यहाँ मांस का अर्थ है मांसल । मांस शब्द से **'अर्श आदिभ्योऽच्** (पा. ५.२.२७)' सूत्र से मत्वर्थ में अच् प्रत्यय करने पर मांस शब्द सिद्ध होगा । जैसे नमकवाची लवण शब्द से अच् प्रत्यय करने पर 'लवण' ही रहता है, जिसका अर्थ होता है नमकीन या 'नमकवाला', वैसे ही यहाँ मांस शब्द है । पूज्य अतिथि के लिए सद्गृहस्थ दो प्रकार के गोजन्य पदार्थ पेश करता है । एक शुद्ध गोदुग्ध और दूसरे गोदुग्ध से बने हुए मांसल पदार्थ मलाई, खोया, पेड़ा, बर्फी आदि । मांसल का अर्थ मांसवाला नहीं, किन्तु जो भीगूदेदार या सारवान् स्थूल पदार्थ है वह मांसल कहलाता है । लोक में भी मांसल शब्द इस अर्थ में प्रयुक्त होता है । अतः प्रस्तुत प्रकरण का यह भाव हुआ कि ये जो गोजन्य स्वादुतर पदार्थ गोदुग्ध और गोदुग्ध से बने पेड़ा, वर्फी आदि हैं, कम से कम उन्हें तो अतिथि से पूर्व कदापि न खाये, विवशता हो तो सामान्य सादा भोजन अतिथि से पूर्व भले ही कर ले । अन्यत्र भी गोजन्य पदार्थोंा दो भागों में बाँटा गया है इष् क्षीर) और ऊर्ज् (स्थूल पदार्थ)- **इषे त्वा, ऊर्जे त्वा** (यजु. १.१) ।

दूसरे, गौ का अर्थ पृथिवी भी होता है, अतः 'अधिगवं' का अर्थ 'पृथिवी से उत्पन्न' लें तो क्षीर का भाव होगा दूध, इक्षुरस, फलों का रस या कोई विशेष स्वादिष्ठ रसेदार पेय पदार्थ और मांस का भाव होगा फल, कन्द, हल्वा, किशमिश, खजूर, बादाम, छुहारा आदि ।

शेष अगले अंक में....

"क्यों हम आर्य व वेदानुयायी बनें और दूसरों को बनाना चाहते हैं"

-मनमोहन कुमार आर्य

आर्य शब्द का सबसे पहले उल्लेख व प्रयोग वेदों में हुआ है। आर्य शब्द का अर्थ श्रेष्ठ गुण, कर्म व स्वभाव वाला मनुष्य होता है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है जो सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से सीधे ४ ऋषियों को प्राप्त हुआ था। वेदों का आदेश है कि विश्व को आर्य बनाओ। आर्य बनाने का अर्थ यह नहीं है कि किसी सम्प्रदाय का अनुयायी बनाना है अपितु आर्य से अभिप्राय मनुष्य को दुरितों वा बुराईयों से छुड़ाकर उसके स्थान पर उसमें श्रेष्ठ व उत्तम गुण, कर्म व स्वभाव को उत्पन्न व प्रतिष्ठित करना है। आर्य शब्द पर विचार करें तो इसका तात्पर्य श्रेष्ठ नैतिक एवं चारित्रिक गुणों की मनुष्य जीवन में प्रतिष्ठा करना है। आर्यत्व की प्रतिष्ठा जीवन को ऋषित्व प्राप्त कराने में होती है। ऋषि को वेदमन्त्रों का द्रष्टा कहा जाता है।

मन्त्र वेदों के श्लोकों व पद्यों को कहते हैं। वेदमन्त्रों के यथार्थ अर्थों को जानना व उनके सत्य अभिप्राय का साक्षात्कार करने सहित उनके अनुरूप आचरण से ऋषित्व की प्राप्ति होती है। हमारे देश में ब्रह्मा से लेकर जैमिनी मुनि पर्यन्त ऋषि परम्परा चली है। जैमिनी मुनि के शिष्य ऋषि नहीं बन सके और उनके बाद यह परम्परा ऋषि दयानन्द से पूर्व तक टूटी रही है। टंकारा के एक जिज्ञासु ब्रालक मूलशंकर ने आयु के २२वें वर्ष में गृह त्याग कर देश भर में धार्मिक विद्वानों की खोज की व उनकी संगति कर उनसे ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति, मृत्यु का स्वरूप और उससे बचने के उपाय, मोक्ष और उसकी प्राप्ति के साधन आदि पर चर्चा की।

उन्होंने उनसे इस विषय को जाना और स्वयं भी सभी विषयों की समीक्षा व विश्लेषण कर उन्हें तात्विक रूप में समझने का प्रयास किया। ऋषि दयानन्द को अनेक योगियों का सान्निध्य प्राप्त हुआ जिनसे उन्होंने योग सीखा और इस योग-विद्या को समाधि प्राप्त कर सफल किया। विद्या के क्षेत्र में उनकी तृप्ति प्रज्ञाचक्षु दण्डी गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी से ढाई वर्ष अध्ययन करने पर पूरी हुई। यहां उन्होंने मुख्यतः अष्टाध यायी-महाभाष्य आर्ष व्याकरण का अध्ययन किया जिससे उनमें वेदों सहित समस्त वैदिक साहित्य के सत्य-अर्थ जानने व उन्हें तर्क से सिद्ध करने की योग्यता प्राप्त हुई। मूलशंकर संन्यास लेकर स्वामी दयानन्द बने थे। उन्होंने वेदों को प्राप्त किया और उसका गहन अध ययन किया। अपने अध्ययन, योग व समाधि के अनुभवों के आधार पर उन्हें वेद के सत्य अर्थ वा रहस्यों को जानने में सफलता प्राप्त हुई।

उन्होंने पंचमहायज्ञ विधि, आर्याभिविनय, स्तुति-प्रार्थना-उपासना के आठ मंत्रों सहित वेदभाष्य में जो पदार्थ एवं भावार्थ किये हैं, उससे वह ऋषि बने। उनके द्वारा किया गया वेदभाष्य समस्त वैदिक वांग्मय में अनुपम व महनीय है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनसे पूर्व यजुर्वेद एवं ऋग्वेद का उनके समान संस्कृत व लोकभाषा हिन्दी में सरल व सुबोध ा भाष्य किसी अन्य विद्वान ने नहीं किया। यदि महाभारत व उसके बाद वेदों व वैदिक वांग्मय के प्रमुख ग्रन्थों पर संस्कृत व जनभाषाओं में ऋषि दयानन्द की योग्यता के समान विद्वानों के भाष्य होते तो आर्य जाति का वैसा पतन कदापि नहीं होता जैसा विगत पांच हजार वर्षों के इतिहास में वर्णित है। अतः आर्य शब्द श्रेष्ठ गुणों वाले मनुष्यों के लिये प्रयोग होता है और ऋषियों में श्रेष्ठ गुणों की पराकाष्ठा होने से वह भी उत्तम आर्य पुरुष वा महापुरुष होते हैं।

इतिहास में वर्णित विश्व के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष राम व कृष्ण आर्य कहलाते थे। इनकी पत्नियां इन्हें आर्य-पुत्र कह कर सम्बोधित करती थीं। आर्य का विलोम शब्द अनार्य होता है जो श्रेष्ठ गुणों वाला न होकर निन्दनीय गुण, कर्म व स्वभाव वाला होता है। रामायण में राम व रावण का उल्लेख मिलता है। राम सुचरित के धनी थे तो रावण दुरितों वा दुर्गुणों से युक्त था। यदि रावण ने आर्यत्व को ग्रहण किया होता तो वह श्री राम की धर्मपत्नी माता सीता जी का अपहरण कदापि न करता। रावण का परस्त्री और वह भी एक श्रेष्ठ आदर्श और सज्जन पुरुष राम की धर्म पत्नी का अपहरण वस्तुतः घोर निन्दनीय कुकर्म था। ऐसा व इसके समान कर्म कोई भी व्यक्ति करे वह निन्दनीय होता है और वह मनुष्य अनार्य मनुष्य की श्रेणी में आता है।

योगेश्वर कृष्ण और दुर्योधन की चर्चा करें तो कृष्ण जी सच्चे आर्य महापुरुष सिद्ध होते हैं क्योंकि उनके गुण, कर्म व स्वभाव वेद व समस्त शास्त्रानुकूल थे। दुर्याधन के गुण, कर्म व स्वभाव वेद विरुद्ध व निन्दित थे। महर्षि दयानन्द, आचार्य चाणक्य, आर्य पुरुष स्वामी श्रद्धानन्द, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, आचार्य डह. रामनाथ वेदालंकार आदि के जीवन चरितों पर दृष्टि डालते हैं तो यह सब आर्य महापुरुषों की कोटि के पुरुष दृष्टिगोचर होते हैं। ऐसे महनीय

गुणों वाले लोगों से मिलकर जो समाज व समूह बनता है उसी को आर्यसमाज कहते हैं। आर्यसमाज में सभी सदस्यों को वेदों का अध्ययन करना व वेदों के अनुकूल मानवीय गुण, कर्म व स्वभाव को धारण करना अनिवार्य है। जो ऐसा नहीं करता वह आर्य व मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं होता। यह दुर्भाग्य है कि वर्तमान समय में आर्यसमाज में भी वह मर्यादायें व श्रेष्ठ मानवीय वैदिक गुण नहीं पाये जाते जिनका कि वेदों में विधान है। अतः वर्तमान में आर्यों व आर्यसमाजियों के जीवन व चरित्रों में सुधार की आवश्यकता है तथापि अन्य संस्थाओं की तुलना में आर्यसमाज में ऐसे लोग बड़ी संख्या में हैं जो वेदानुकूल गुणों से युक्त हैं। ऐसे आर्य स्वभाव के लोगों के कारण ही आज भी आर्यसमाज जीवित है और वह नास्तिकता के निवारण, समाज सुधार, देशोत्थान, शिक्षा का प्रसार करने सहित अन्धविश्वासों का खण्डन व उनका उन्मूलन करने में सक्रिय है। आर्यसमाज का उद्देश्य समस्त विश्व को श्रेष्ठ विचारों व उत्तम चरित्र सहित उत्तम गुण, कर्म व स्वभाव वाला बनाना है। ऐसा समाज व देश जहां के सभी मनुष्य वेदों का अध्ययन करते हों, अपने दुर्गुणों का त्याग करने वाले हों तथा देश हित के लिये समर्पित हों। यह ऐसी बातें हैं जिसके कारण आर्यसमाज सृष्टि में सदैव प्रासंगिक रहेगा और इसकी आवश्यकता बनी रहेगी।

आर्य श्रेष्ठ गुणों वाले मनुष्यों को कहते हैं। आर्य बनने के लिये मनुष्य को १६ संस्कारों का वरण व धारण करना होता है। यह संस्कार वेदों की शिक्षाओं के अनुरुप होते हैं। इन संस्कारों में से कुछ संस्कार जन्म से पूर्व होते हैं और कुछ जन्म के समय व उसके बाद। गुरुकुल व विद्यालय जाने तक बालक बालिकाओं को अपने घर पर अपने विद्वान माता-पिता से सद्गुणों की शिक्षा लेनी होती है। इसके बाद वह गुरुकुल व विद्यालय में वहां के आचार्यों से संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी व अन्य भाषाओं सहित विविध विषयों का ज्ञान-विज्ञान, गणित आदि का अध्ययन करते हैं। घर और गुरुकुलों में प्रातः ४.०० बजे शय्या त्याग, प्रातःकाल के मन्त्रों से ईश-प्रार्थना, शौच, आसन, प्राणायाम व पुस्तकीय अध्ययन सहित सन्ध्या व यज्ञ आदि करते हैं।

आचार्यों व गुरुजनों को सम्मान व आदर देने की परम्परा भी आर्यों की ही देन है। आर्य व वैदिक परिवारों के बच्चे अन्धविश्वासों से सर्वथा दूर रहते हैं। वह ईश्वर, जीवात्मा व जड़ प्रकृति के सत्यस्वरूप व गुणों आदि को जानते हैं और उसी के अनुसार ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना करते हैं। आर्य सन्तानों, विद्यार्थियों व गृहस्थियों में मुख्य विशेषता वेदानुकूल नैतिक व चारित्रिक गुणों का धारण व पालन होता है जिसमें अज्ञान व अंधविश्वासरहित सामाजिक नियमों के पालन को सर्वाधिक महत्व दिया जाता है। इस प्रकार का जीवन एक आर्य व्यक्ति का होता है।

महर्षि दयानन्द ने वेद के सर्वोच्च महत्व के कारण ही वेदों का प्रचार व प्रसार किया। उन्होंने वेदों की मान्यताओं के आधार पर सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, संस्कारविधि, पंच-महायज्ञविधि, व्यवहारभानु, गोकरुणानिधि आदि अनेक ग्रन्थों सहित वेदभाष्य की रचना की। ऋषि दयानन्द ने अवैदिक मान्यताओं पर विभिन्न मतों के आचार्यों से शास्त्रार्थ किये व उनकी शंकाओं के समाधान भी किये। ऋषि दयानन्द के विपक्षी विद्वानों से संवाद में वेद की मान्यतायें अखण्डनीय सिद्ध हुईं और मत-मतान्तरों की मान्यतायें खण्डित व मिथ्या सिद्ध हुई। आर्य जीवन पद्धति अपनाकर श्रेष्ठ कर्मों को करने से मनुष्य इहलोक और परलोक में सुख, उन्नति व मुक्ति को प्राप्त होता है। आर्य विद्याव्यसनी मनुष्यों का समूह होता है जबकि मत-मतान्तरों के अनुयायी व आचार्य सत्य व ज्ञान प्राप्ति पर बल नहीं देते और न ही अपने मत की मान्यताओं के सत्यासत्य की समीक्षा ही करते हैं। आर्यसमाज एक ऐसी संस्था है जहां अनेक विषयों पर विद्वान आपस में चर्चा व शास्त्रार्थ भी कर लेते हैं। ऐसे कुछ विषय हैं काल-अकाल मृत्यु, वृक्षों में जीव है या नहीं, जीवात्मा का स्थान वक्ष स्थित हृदय है या सिर में आदि। इन विषयों पर आर्य विद्वानों में परस्पर अनेक बार चर्चायें हुईं हैं। आर्य ज्ञान विज्ञान से युक्त, सच्चरित्र, ईश्वर विश्वासी, पूर्ण शाकाहारी, अभक्ष्य पदार्थों का सेवन न करने वाले, दूसरों के प्रति अन्याय व शोषण की भावना से मुक्त, अज्ञान व अन्धविश्वासों से सर्वथा रहित, मिथ्या परम्पराओं को न मानने वाले व्यक्ति होते हैं।

ऐसे व्यक्ति ही श्रेष्ठ समाज व देश के निर्माण में सहायक होते हैं। अन्धविश्वासों, कुपरम्पराओं, मिथ्या धार्मिक विश्वासों व मान्यताओं के आचरण से देश कमजोर होता है। वेद को मानने वाले आर्यों में यह बुराईयां नहीं होती। अतः आर्य और आर्यसमाज श्रेष्ठ जीवन, श्रेष्ठ समाज व उत्तम देश के पर्याय हैं। इसी कारण सभी आर्य कहलाने वाले बन्धु आर्यत्व से युक्त होते हैं और दूसरे बन्धुओं के जन्म-जन्मान्तर में हित व कल्याण के लिये उन्हें आर्यसमाज का सदस्य व अनुयायी बनाकर सच्चा आर्य बनने की प्रेरणा करते हैं। इस विश्व में पूर्ण सुख व शान्ति तभी सम्भव है कि जब सब लोग आर्य बनें और वेदानुकूल आचरण करना स्वीकार करें। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

"आधुनिक समय में विवाह का महत्व"

शादियाँ कम क्यों हो रही है ?

-राजीव चौधरी

विवाह भारतीय समाज में परम्परा के रूप एक महत्वपूर्ण और पवित्र हिस्सा रहा है। बल्कि ये कहिये कि विवाह एक जन्म का नहीं बल्कि सात जन्मों का पवित्र बंधन भी माना जाता रहा है। विवाह एक नवयुवक एवं एक नवयुवती के साथ रहने जीने आगे बढ़ने का रिश्ता नहीं बल्कि यह दो परिवारों के बीच बहुमूल्य सम्बन्ध भी स्थापित करता चला आ रहा हैं। किन्तु आज की भागती दौडती जिन्दगी की तेज रफ्तार में यह रिश्ता बेहद कमजोर होता जा रहा है। यदि आंकड़ों पर नजर डाले तो इसके टूटने की संख्या पश्चिम के देशों मुकाबले कुछ कम रह गयी हैं। ये भी कह सकते है कि आज के आधुनिक समय में विवाह का महत्व दिन पर दिन कम होता जा रहा हैं।

यदि गंभीरता से इस विषय पर चर्चा की जाये तो यह एक ऐसी समस्या का बनती जा रही है जो आने वाले समय में समाज और परिवारों की तबाही का बड़ा कारण बनेगी। आज हो ये रहा है कि इस आधुनिक सदी में एक तो नौजवान युवक-युवती विवाह के लिए आसानी से तैयार नहीं हो रहे और जो हो रहे है उनमें से अधिकांश के जल्द ही तलाक के मामले कोर्ट में खड़े मिल रहे हैं। जहाँ तेजी से बदलते समय में आज कई चीजें बदली वहां कुछ सामाजिक प्रतिष्ठा के रूप भी बदल गये हैं। मसलन कुछ समय पहले तक लडकें-लड़कियां मां-बाप की इँच्छा के अनुसार विवाह करके घर गृहस्थी बसाकर संतुष्ट हो जाया करते थे लेकिन आज ऐसा बहुत कम देखनें को मिल रहा हैं। बदलते इस दौर की बात करें तो स्वतंत्रता के साथ लड़कियों को अपने न सिर्फ पंख मिले, बल्कि उन पंखों को फैलाने के लिए आसमान भी मिला। ऐसे में शादी करके घर बसाने के कथन में बदलाव आ गया। अब सामाजिक रूप से स्थापित होने का मतलब शादी करके बच्चे पैदा करना नहीं रह गया, बल्कि एक अच्छी नौकरी,व्यवसाय या आर्थिक संपन्नता से हो गया हैं।

इसी विषय को यदि पलटकर लड़कों के मामले में देखें तो अधिकांश लड़के भी इससे बचने की कोशिश करते हुए लिव इन रिलेशनशिप जैसे रिश्तों को प्राथमिकता दे रहे है। दिन पर दिन दहेज के बढ़ते झूठे सच्चें मुकदमों ने कानून का किसी एक पक्ष में ज्यादा झुकना और दूसरे पक्ष को इसके खतरनाक नुकसान झेलने देना भी शादी का चलन घटने का बड़ा कारण है। ऐसा कतई नहीं है कि विवाह की संस्था खोखली हो गयी है और समाज को इससे किनारा करने की जरूरत है। नहीं बल्कि यह जो कमी हो रही है आज इसमें सुधार करने की जरूरत हैं। आज जब किसी युवा से शादी के बारे में चर्चा की जाती है तो वह नकारत्मक भाव प्रकट करते हैं यानि वह इस पवित्र संस्था को एक गुलामी जिन्दगी बताकर इससे बचने का प्रयास करेंगे।

आज से १० वर्ष पहले हुई शादी और पिछले दो से तीन वर्षों में हुई शादियों में काफी अंतर देखने को मिलता है मसलन दस वर्ष माता-पिता और परिवारों की सहमति से हुई शादियाँ जिनमें लड़का-लड़की, दो परिवार, रिश्तेदारों के साथ जितने सैकड़ों-हजार परिवार शामिल होते थे सभी एक तरह से इसके साक्षी बन जाते थे। ऐसे में जब कभी इस रिश्ते में कुछ समस्या उत्पन्न होती थी तो पूरा परिवार और समाज इसे बचाने की कोशिश में जुट जाता था। किन्तु प्रेम विवाह या कुछ समय में एक दूसरे से आकर्षित होकर की गयी शादियाँ जल्द टूट रही हैं।

सामाजिक प्रतिष्ठा का भय जो हमेशा रिश्ता बचाने में मदद करता था आज वह पूरी तरह से गायब होता जा रहा हैं। अगर अभी वर्तमान समय की बात किया जाए, तो अगर सामने वाला लड़का हो या लड़की अगर किसी से प्रेम कर लेता है, फिर वह विवाह के बंधन मे बंधने के बाद जरा सी बात पर रिश्ता तोड़ देते हैं। पिछले दिनों में ऐसे कई रिश्ते देखें एक लड़की के तलाक का कारण सिर्फ इतना था कि शादी के बाद लड़के ने उसके मुंह पर थप्पड़ मार दिया था। लड़की ने यह बात बर्दास्त नहीं की और तलाक की अर्जी डाल दी।

एक दूसरे लड़के ने अपनी पत्नी से सिर्फ इस बात से तलाक लिया कि वह देर रात तक सोशल मीडिया फेसबुक आदि पर अपने मित्रों से चेट किया करती थी। यानि आजकल के लोगों की धारणा संकीर्ण विचारधारा जैसी हो गई है, क्योंकि उन्हें प्यार क्या होता है? विवाह क्या होता है? और इसकी पवित्रता क्या होती है? उनके बारे में यह अभी तक अनभिज्ञ है। पहले के समय और आज के समय में यही अंतर है कि पहले के लोग विवाह को एक पवित्र रिश्ता मानकर हर सुख- दुख,उतार- चढ़ाव मैं साथ चल कर अपने रिश्ते को एक मंजिल तक पहुंचाते थे। परंतु आजकल के विवाह में अगर थोड़ा भी एक दूसरे को रोक- टोक किया या एक दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति ना कर पाए तो फिर यह रिश्ता ज्यादा दिनों तक नहीं चल पाता, और तलाक की नौबत आ जाती है। इसीलिए आजकल की युवा पीढ़ी द्वारा विवाह को मजाक बनाया गया है, एहसास और रिश्ता अब पूर्ण रूप से खतम हो गया है।

మాతృ గౌరవము

-పి.వి. రమణారెడ్డి

"ధన్యోఽసి రే యో వసుధామశత్రు రేకశ్చిరం పాలయితాఽసి పుత్ర తత్పాల నాదస్తు సుఖోపభోగో ధర్మాత్ ఫలం ప్రాప్స్యసి చామరత్వమ్

అర్థము : ఓ బిడ్డా ! నీవు ధన్యుడవు. ఒంటరిగానే శత్రురహితుడవై ఈ పృథివిని పాలిస్తున్నావు. ధర్మపూర్వకంగా ప్రజాపరిపాలన చేయుట వలన నీకు ఈ లోకమందు సుఖమున్ను, మరణానంతరం మోక్షప్రాప్తి యున్ను కలుగుతుంది. రాజ్యపరిపాలన-ఉత్తమ వ్యవస్థ ఉండాలని ఉపదేశిస్తుంది.

"రాజ్యం కుర్వన్ సుహృదో సందయేథాః సాధూన్ రక్షంస్తాత యజ్ఞైర్యజేథాః
దుష్టాన్నిఘ్నన్ వైరిణశ్చారిమధ్యే గోవిప్రార్థే వత్స మృత్యుంవ్రజేథాః

-మాఘ పురాణం 26-41

అర్థము : ఓ నాయనా ! నీవు రాజ్యపరిపాలన చేస్తూ మిత్రులను సంతోష పెట్టు. సాధువులను అనగా శ్రేష్ఠ పురుషుల నురక్షిస్తూ విరివిగా యజ్ఞములను (సత్కర్మలను) చేయుము. గో-బ్రాహ్మణులను (సాధుజంతువులను, బ్రహ్మజ్ఞానులను) పోషిస్తూ, సంగ్రామభూములందు శత్రువులను దునుమాడుతూ, స్వయంగా అవసరమగుచో మృత్యువును గూడా స్వీకరించు. ఈ విధంగా తల్లులు తమ బిడ్డలను ఉత్తేజపరిచి, ఉత్తమ సంస్కారాలనందించేవారు.

6) ఈలాంటి ఉదాహరణలెన్నో పాశ్చాత్య దేశములందున్నూ లభించ గలవు. అమెరికా ప్రెసిడెంటు గారఫీల్డును చంపినవాడు గీటూ. అతడు తల్లి గర్భంలోనుండగా అతని తల్లి గర్భం తీయించుకొని, ఆ పిండాన్ని హత్య చేయాలని ప్రయత్నించింది. కాని గర్భం పోలేదు. అతడు బ్రతికాడు. తల్లి గర్భమందున్నప్పుడు తల్లి మనోభావాల ప్రభావం వలన అతడు హంతకుడైనాడు. అమెరికా ప్రెసిడెంటును హత్యచేశాడు.

7) నెపోలియన్ విషయంలో గూడా ఈలానే జరిగింది. అతడు తల్లి గర్భంలోనున్నప్పుడు, తల్లి సైనికులు చేసే కవాదులను చూస్తూ తన్మయురాలయ్యేది. సైనికులు 'లెఫ్ట్ రైట్' అంటు కందంతొక్కుతుంటే వొళ్ళుజలదరించే వీరగీతములు ఆలాపిస్తుంటే ఆమె గగుర్పాటు చెందుతూ తన్మయురాలైపోయేది. గర్భావస్థ యందు కలిగిన ఈ సంస్కారములు నెపోలియన్‌నను ఒక మహావీరునిగా మార్చివేసినవి.

8) ప్రిన్స్ బిస్మార్క్ (జర్మన్) తల్లి గర్భమందుండగా, తల్లి నెపోలియన్ సేనలు జర్మనీలో ప్రవేశించి చేసిన మారణహోమం వలన ఏర్పడిన శిధిలములైన భవనములను ఎంతో బాధతో చూస్తూ ఉండెడిది. ఆ సంస్కారముల ప్రభవంచేత పుట్టి ప్రిన్స్ బిస్మార్క్-ఫ్రాన్స్ దేశంతో ప్రతీకారేచ్ఛ కలిగిన యోద్ధగా రూపొందాడు.

గర్భాధాన సంస్కారము వైదిక సంస్కృతిలో ఒక ముఖ్యమైన భాగము. మానవ నిర్మాణంలో ఇదొక చమత్కారపూర్ణమైన ఆలోచన. సమాజాన్ని ఉద్ధరించాలనే నినాదాలు చేసేవారు గుర్తుంచుకోవలసిన దేమనగా-ఈ సంస్కారం (గర్భాధానం) యొక్క మహత్వమును గుర్తించాలి. ఈ విషయంలో లోకంలో చెప్పుకొనే ప్రకారం-రామలక్ష్మణులు అరణ్యములోనుండగా లక్ష్మణుని బ్రహ్మచర్య మును పరీక్షించాలనే ఉద్దేశ్యముతో శ్రీరాముడీ విధంగా ప్రశ్నించాడు.

"పుష్పం దృష్ట్వా ఫలందష్ట్వాదృష్ట్వా చ నవయౌవనామ్ ।
ఏకాంతే కాంచనం దృష్ట్వా కన్య నో విచలేన్మనః ॥

అర్థము : లక్ష్మణా ! సువాసన గల పుష్పాన్ని, స్వాదిష్ట ఫలాన్ని, ఏకాంతము నందున్న జవరాలిని ఒంటరిగా లభించిన కాంచనమును చూచి ఎవని మనస్సు చలించదే చెప్పగలవా ?

యతివరుడైన లక్ష్మణుని సమాధానం

"మాతా యస్య పతివ్రతా పితాయస్య చ ధార్మికః ।
ఏకాంతే కాంచనం దృష్ట్వా తస్య నో విచలేన్మనః ॥

అర్థము : ఎవని తల్లి ప్రతివ్రతయో-ఉత్తమశీలవతియో, ఎవని తండ్రి ధర్మపరాయణుడో, సత్ప్రవర్తనకలవాడో, అతని మనస్సు ఏకాంతమున లభించిన కాంచనమును చూచినను చలించదు. సదాచారవంతులు, ధర్మపరులైన తల్లిదండ్రులు తమ సంతానమునకు పవిత్ర భావములను ఉపదేశిస్తూ వారిని శీలసంపన్నులుగా చేస్తారు.

తల్లిని గురించి-బిడ్డలు చేయవలసిన విధులు (కర్తవ్యములు)

"అనువ్రతః పితుః పుత్రో మాత్రా భవతు సంమనాః ।
జాయా పత్యే మధుమతీం వాచం వదతు శాన్తివామ్ ॥

-అధర్వ 3-30-2

అర్థము : పుత్రః=పుత్రుడు, పితుః=తండ్రి యొక్క, అనువ్రతః=ఆజ్ఞాకారిగా నుండాలి. మాత్రా సంమనాః=తల్లి మనస్సును సంతోష పెట్టువాడుగా నుండాలి. జాయా= పత్ని, పత్యే=తన భర్త కొరకు సదా, మధుమతీంవాచం=మధురమైన, మరియు శాన్తినామ్=శాంతి ప్రదమైన, వాచం=వాక్కును, వదతు=మాట్లాడుగాక, ఈ మంత్రమునందు విశేషంగా గుర్తుంచుకోవలసిన విషయం. మాత్రా భవతుసంమనాః=తల్లి మనస్సు నెల్లప్పుడు సంతోషపెట్టడమే బిడ్డల రక్తవ్యమని గుర్తించాలి. మనస్మృతిలో-మను మహర్షి ఈ విధంగా అభిప్రాయపడుచున్నారు.

"యం మాతా పితరౌ క్లేశం సహేతే సమ్భవే నృణామ్
న తస్య నిష్కృతిః శక్యా కర్తుం వర్షశతైరపి ॥

-మను 2-227

అర్థము : బిడ్డలను కని, పెంచే సమయంలో తల్లిదండ్రులు పడే వేదనకు కష్ట సహనమునకు బదులు తీర్చుకోవడం ఎన్నివందల సంవత్సరములు సేవలు చేసినను పూర్తికాదు. తల్లిదండ్రుల ఋణాన్ని తీర్చుకోలేరు.

నేటి వైజ్ఞానికులు భూమిని తూచగలిగారు గాని, మాతృమూర్తి హృదయాన్ని కొలవలేక పోయారు. బిడ్డను గురించి తల్లి హృదయంలో భావతరంగములను గురించిన ఒక చిన్న సన్నివేశము -

వీరబలుడనే మంత్రి ఘాతృఋణము తీర్చుకోవాలనే భావంతో ఒక లక్షరూపాయల సంచినితీసికొచ్చి, తల్లి పాదపద్మములకు సమర్పిస్తూ అన్నాడు. "మాతాజీ ! అమ్మా !

నీ యిష్టమొచ్చిన విధంగా దానం చేయగలవు. దానితో నీ ఋణము నుండి నాకు ముక్తి లభిస్తుంది" ఈ విధంగా వీరబలుడు ఎన్నో రోజులు చెప్పగా తల్లి అన్నది. పుత్రా ! బిడ్డా ! నా ఋణం తీర్చుకోవాలనుకుంటే ఒక రోజు రాత్రిపూట నా వద్ద పడుకో తల్లి మంచం మీద పడుకోడానికి పుత్రుడు సమ్మతించాడు. రాత్రి కాగానే వీరబలుడు తల్లి దగ్గరకు పోయిపడుకొన్నాడు. అతనికి నిద్రరాగనే తల్లి లేపి నాయనా దప్పికయినది. నీళ్ళుత్రాపరా అన్నది సంతోషంగా లేచి వీరబలుడు గ్లాసుతో నీళ్ళిచ్చాడు. ఆమె ఒకటి రెండు గుటకలు వేసి, మిగిలిన నీటిని పక్కమీద దొర్లించింది. పక్క అంతా తడసి పోవడం చూచి, ఏమి చేశావమ్మా అని అడుగగా నాయనా పొరపాట యిపోయినదని చెప్పింది. వీరబలుడు శాంతించి, నిద్రించాడు. నిద్రలో పుత్రుడు గురకలు పెట్టడం మొదలు పెట్టగానే తల్లి వానిని లేపి బిడ్డా ! దప్పికగుతున్నది. నీళ్ళు యివ్వమనగా, 'అమ్మా-ఇప్పుడేగదా నీళ్ల త్రాపాను ఇంతలోనే మరలా దప్పికైనదా ? పత్తిగింజలు ఏమైనా తిన్నావా ! అంటే లేచి, గ్లాసు నిండా నీళ్ళు నింపి యిచ్చాడు. తల్లి మొదటి మాదిరిగానే ఒకటి రెండు గుటకలువేసి, నీటినంతటిని పక్కమీద పోసింది. దీనికి వీరబలుడు విసుక్కుంటూ అమ్మా-ఏమిచేశావు. పక్కంతా తడిపేశావు. అనగా నాయనా ! చీకటిగా ఉన్నందున గ్లాసు చేతినుండి జారిపోయినదని జవాబు చెప్పినది. అది విని శాంతించి వీరబలుడు వెంటనే నిద్రించ ప్రారంభించాడు. నిద్రపోతుండగా మరలా లేపి, మంచి నీళ్ళు అడుగగా ఈసారి వీరబలుని కోపం 104 డిగ్రీలు వరకు పెరిగింది. కోపంతో అమ్మా ! ఏమిటి ఒకటే నీళ్ళు తీసికొచ్చి ఇదిగో త్రాగు-చావు అన్నాడు. తల్లి మరలా మొదటి లాగానే కొంచెం నీరు పెదవులకు తావించి, తక్కిన జలంతో పక్కంతా తడిపివేసింది. ఇప్పుడు ఇక వీరబలుడు సహించలేకపోయి, కోపంతో అన్నాడు గదా ఈలా కష్టపెట్టుడానికేనా నన్ను నీ మంచం మీదపడుకోమన్నావు ? నీ బుద్ధి చెడిపోయినట్టుగా వున్నది. అప్పుడు తల్లి అన్నది. బిడ్డా ? చాలించు ఆపు-నీవు నా ఋణం తీర్చుకొన్నావు. తల్లి ఋణం తీర్చుకోగలుతావా ? నీ తలమీద ఎన్ని శిరోజములన్నవో అన్ని జన్మలెత్తి నిరంతర సేవ చేస్తూ గూడా మాతృఋణు నుండి విముక్తుడవుకాజాలవు. ఎందుకంటావా నీకు వినిపిస్తాను విను నీవు గర్భంలో ఉన్నావు. ప్రసవించే దినములు సమీపించినవి. (ఫలితజ్యోతిషం వేదవిరుద్ధము ఇచ్చట కేవలం ప్రసవవేదనంలో తల్లి పడే బాధను తెలుపుటకే ఈ ఉదాహరణ) జ్యోతిష్కులను అడుగగా నా గర్భాంలో బిడ్డ పుత్రడేనని చెప్పారు. నా బిడ్డదేమగునని అడుగగా జ్యోతిష్కులు చెప్పిన సమాధానమిది-నీ ప్రసవం రాత్రి మొదటి ఝామున జరిగితే-నీ బిడ్డడు చౌకీదారగును, రెండవ ఝాములో జరిగితే-జేల్‌దార్ అగును. మూడవ ఝాములో జరిగితే మంత్రి అగును. నాల్గవ ఝాములో అయితే మహారాజగును.

ప్రసవించే సమయం దగ్గరకు రాగానే ఓ పరమేశ్వరా ! నా ప్రసవం మొదటి రెండవ ఝాములో కలుగకుండుగాక అని ప్రార్థించాను. మొదటి ఝాములో ప్రసవంకాలేదు. కాని రెండవ ఝాము ప్రారంభం కాగానే నాకు ప్రసవవేదన ప్రారంభమై తీవ్రతరంకా జొచ్చింది. ఏదో విధంగా సహించి రెండవ ఝాము ముగిసింది. ఇప్పుడు సహించరాని వేదన ప్రారంభించింది. ప్రాణాలు పోతున్నవా అన్నంత బాధకలిగింది ఎంతో సహించిన తరువాత, మూడవ ఝాముతో నిన్నుకన్నాను అందువలన నీవు మంత్రివి కాగలిగావు. ఇప్పుడు నీవే చెప్పు ? నీవిచ్చిన ఈ చిల్ల పెంకులతో నా ఋణం తీరిపోయిందా ?

నీవు పసిబిడ్డగా ఉన్నప్పుడు పక్కమీద, మలమూత్రములు వదిలేవాడవు. నీ తడిసి పోయిన వస్త్రములను విప్పివేసి, నా వద్ద ఉన్న పొడిగుడ్డలతో నిద్రబుచ్చే దాన్ని ఒక్కరోజుకాదు, వారం రోజులు కాదు, మాసంనిండా కాదు నిరంతరం కొన్ని సంవత్సరాల వరకూ నీ యంతట నీవు వేరే పడుకోగలిగే వరకు నేను అలా చేస్తూవుం దేదాన్ని ఒకటి రెండుసార్లు పక్కనీటితో తడిసినందుకే-కోపం వచ్చి విసుక్కుంటు న్నావు. ఒక్క రాత్రికే గాబరా పడ్డావు.

ఈ విషయం విని వీరబలుడు సిగ్గుపడి తల్లిపాదాలు పట్టుకొని అన్నాడు. "అమ్మా ! నీవు ధన్యురాలవు. నీ ఋణం చెల్లించడం అసంభవం".

ఇట్టి మమతా స్వరూపిణియగు మాతృ మూర్తితో ప్రతి పుత్రుడు-పుత్రిక-ప్రేమైక హృదయ సంపన్నురాలుగా ఉండాలి. పొర పాటున గూడా ఎప్పుడైన వేరొక శబ్దములు పలుకరాదు. తల్లిదండ్రులతో విరోధం పెట్టుకోరాదని శుక్రనీతి సారమున్నూ ప్రబధిస్తుంది.

"మాతృ పితృ గురు స్వామి భాతృ పుత్ర సఖిష్వపి ।
న విరుద్ధయే న్నాకుర్యాన్మనసాఽపి క్షణం క్వచిత్ -శుక్రనీతి 3-50

అర్థము : తల్లి, తండ్రి, గురువు, స్వామి, సోదరుడు, పుత్రుడు, మిత్రుడు వీరితో ఒక్క క్షణమైనను విరోధించరాదు. అపకారం చేయ రాదు.

వేదాధ్యయనానంతరం స్నాతకులకు ఇచ్చిన దీక్షాంత భాషణము వేద విద్యలు చదవడం పూర్తి అయిన మీదట ఆచార్యుడు అన్తే వాసిని (శిష్యుని) అనుశాసిస్తాడు. దీక్షాంతంలో ఉపదేశిస్తూ అంటాడు.

"మాతృదేవో భవ, పితృదేవో భవ
ఆచార్యదేవో భవ, అతిథిదేవో భవ
-తైత్తిరీయ 1-11-2

అర్థము : తల్లిని దేవతవలె భావించు. తండ్రిని దేవునివలె తలంచు, ఆచార్యుని దైవము వలె గౌరవించు, అతిథిని (సమాజం కొరకు జ్ఞానోపదేశం చేస్తూ వచ్చేవారు) దేవత వలె ఆదరించు నవస్నాతకునకు 'తల్లిని దేవతాతుల్యంగా భావించమని చెప్పి-తల్లికి గౌరవనీయులలో మొదటి స్థానమిచ్చారు. పై నలుగురను దేవతలుగా భావించి సత్కరించ మని ఆచార్యుడు నవస్నాతకునకు ఆదేశమిస్తు న్నాడు. తల్లి నిన్ను తొమ్మిది మాసాలు తన గర్భమందుంచుకొని పాలించి పోషించింది. తండ్రి నిన్ను పోషించి పెద్దవాడిని చేశాడు. ఆచార్యుడు నీకు విద్యాబుద్ధులు గరిపి నిన్ను మానవునిగా మార్చాడు. అతిథిని మీ తల్లిదండ్రులు శిరముల వంచి నమస్కరించి ఆతిథ్యము ద్వారా గౌరవిస్తున్నారు. కాబట్టి వీరినందరిని దేవతలని భావించు, నీవున్ను ఒకప్పుడు తండ్రివికావచ్చును. సంతానం కలుగుతుంది. నీ భార్య బిడ్డలకు మాతృమూర్తి కావచ్చును. నీవున్నూ ఒకప్పుడు అతిథిగా మరొకరి గృహమునకు పోవచ్చును. ఇప్పుడు నీవు వీరందరిని దేవతలుగా భావించినచో

మీ సంతానమున్నూ మిమ్ములను దేవతాతు ల్యులుగా భావిస్తారు. గృహస్థ ధర్మమందున్న ఈ పద్ధతి (ఆచారము) వైదిక సంస్కృతిలో ఒక ముఖ్యమైన భాగము. ఇదే ధర్మమును నీవు నిర్విఘ్నంగా సాగించు. ఈ క్రమమునే సంతానం తర్వాత సంతానం అనుసరిస్తూ పోతుంది. ఈ క్రింది ఐదుగురిని తల్లివలె భావించి గౌరవించమనిచాణక్య నీతిలో ఉప దేశింపబడింది.

"రాజపత్నీ గురోఃపత్నీ మిత్రపత్నీ తథైవచ పత్నీ మాతా స్వమాతాచ పఞ్చైతా మాతరః స్మృతాః -చాణక్య నీతి 4-27

అర్థము : దేశాన్ని పాలించి సుఖసం పదలను కలిగించే ప్రభువుపత్ని, విద్యా విజ్ఞానాన్నిచ్చి మనుష్యునిగా తయారు చేసిన ఆచార్యునిపత్ని, ఆప్తమిత్రుని భార్య అదే విధంగా భార్యతల్లి (అత్త) స్వమాతయు వీరందరిని తల్లులుగానే భావించాలి. తల్లిలా గానే వీరితో వ్యవహరించాలి. గౌరవించాలి.

మాతృ మమకారము

ఒక పిల్లవాని కొరకు ఇద్దరు తల్లులు వీడునాకొడుకున, వీడునాకొడుకని పరస్పరం గోలగోలగా పోట్లాడుకోజొచ్చారు. చివరకు ఈ వివాదము రాజుగారి వద్దకు చేరింది. ఈ వివాదమును రాజుగారు పరిష్కరించలేక చిన్తాగ్రస్తులైరి. ఎందుకు చింతిస్తున్నారని రాణిగారడుగగా-పోట్లాటకు గల కారణ మును వివరించాడు. 'ఈ విషయం స్త్రీలకు సంబంధించినది కాబట్టి నేను పరిష్కరిస్తాను. మీరు నిశ్చింతగా ఉండుడని' చెప్పినది.

రెండవరోజు రాజసింహాసనం మీద రాణిగారు గంభీరంగా కూర్చున్నారు. పిల్లవాడు ఎవరి బిడ్డడోతేల్చడానికి ఒక హంతకుని పిలిచి, కృపాణంతో ఈ పిల్లవానిని రెండు ముక్కలు చేసి చెరొక భాగం యివ్వమని చెప్పింది. ఆ బిడ్డకు నిజంగా ఎవరు తల్లో ఆమె ఈ మాట వినగానే ఏడ్చి దగ్గోలు పెట్టిరాణిగారూ ! ఈ బిడ్డ నాకవసరంలేదు. ఆమెకే యివ్వమని ప్రార్థించింది. ఏ తల్లి ఆ బిడ్డను కనలేదో ఆమె పిల్లవానిని ముక్కలుగా నరుకుటకు చాలా సంతోషపడింది. రాణిగారు వెంటనేతెలిసికోగలిగారు. ఏ తల్లి పిల్లవానిని ప్రాణం కంటే అధికంగా ప్రేమిస్తుందో, ఆమెయే ఈ పిల్లవానికి తల్లి. ఆమెకే ఈ బిడ్డనివ్వమని న్యాయం చెప్పింది. నిజంగా తల్లి బిడ్డయందుండే మమకారం అమర మైనది. అట్టి మమత శాశ్వతంగా ఉండాలి.

తల్లి మమకారం-హృదయస్పందన

హృదయమునకు సంబంధించిన విషయం రాగం. ఒకానొక ఫ్రెంచి లేఖకుని కథ జ్ఞప్తికొస్తుంది. ప్రేమికుడు యువకుడు యౌవన వనవిహారిణయగు ప్రేమికతో "ప్రేయసీ ! సమస్త ప్రపంచైశ్వర్యమునంతయు నీ చరణములకు సమర్పించగలను. ఆకాశమందున్న నక్షత్రాలను తెంపి నీ జఇులో పూలదండగా అలంకరించగలను. ఒక్కసారి నీవు సైగచేసి నాదానివని తెలిపితే చాలు" అన్నాడు. నిజమా ? అని ప్రేమిక ప్రశ్నించగా-నిజంగా, నిజంగా, నిజంగా- అన్నాడు. అయితే నీ మదునలి తల్లి హృదయాన్నితీసి నాకు తీసికొచ్చి యివ్వగలి గితే-అప్పుడు నేను నీ దాననని అన్నది. ప్రేమతో పిచ్చివాడైన యువకుడు ఈ పాపకర్మ చేయుటకు తయారై పిడికత్తితో తల్లి గుండెను చీల్చి హృదయమును బయటకు లాగి, దానిని బహుమూల్యమైన పళ్ళెరమందుంచి, పట్టురూ మాలతో కప్పి తన ప్రేయసికి బహుకరిం చుటకు బయలుదేరాడు. ఇంతలో ఆ యువకుడు ఎదురు దెబ్బతగిలి పడపోయాడు. పళ్ళెం ఒకచోట, రూమాల మరొక చోట తల్లి గుండె వేరొక చోట పడిపోయాయి. అప్పుడు "బిడ్డా ! నీకేమైనా దెబ్బతగులలేదుగదా" అనెడి సన్నటి శబ్దము దుమ్ములోపడి చెల్లాచెదరైన అమ్మ హృదయమునుండి ఆ యువకునకు వినబడింది.

ఆ యువకుడు లేచి, ఆ గుండెను తీసి కొనిపోయిన తన ప్రేయసికి సమర్పించాడు. "తల్లికి కానివాడవు నాకు మాత్రము ఏమవుతావని" ప్రేయసి జవాబిచ్చింది.

శ్రవణకుమారుని పితృభక్తి

శ్రవణకుమారుని పితృభక్తి-సేవా భావము జగత్ప్రసిద్ధమైనది. వృద్ధులు, అంధులైన తన తల్లిదండ్రులకు శ్రద్ధతో సేవలొనరించెడి వాడు. తీర్థస్థానములు చూపించుటకు తల్లిదండ్రులను కావడిలో కూర్చోపెట్టుకొని ఆ కావడిని మోస్తూ యాత్ర చేయుచుండెడి వాడు.

ఒకసారి అరణ్యములో పోవుచుండగా, తల్లికి, తండ్రికి దాహమైనది. నీరు తెచ్చుటకై నదీ తీరమునకు పోయాడు. అప్పుడే దశరథమహారాజు వేటకై అదే అరణ్యమునకు వచ్చాడు. నీటిలో శబ్దమును విని, అడవి మృగమనుకొని శబ్దభేది బాణమునువదలగా ఆ బాణము శ్రవణకుమారుని గుండెకు తగిలింది. ఏదో మనుష్యుని శబ్దముగా విని వెళ్ళిచూడగా తన చేతిలో శ్రవణకుమారుని గుండెనుండి తీక్షణమైన బాణమున్న తీసి, "నీవెవరవు ? నీ పేరేమిటి ?" అని అడిగాడు.

మహారాజా ? నేను శ్రవణకుమారుడను. గుడ్డివారు వృద్ధులైన నా తల్లిదండ్రుల దప్పిక తీర్చుటకై నేనిచ్చుటకు వచ్చాను. వాళ్ళు చాలా దప్పిగొని యున్నారు. దప్పిక గొని వారు ప్రాణాలనే వదలిపెట్టవచ్చు. అందువలన తమరు వెంటనే మా తల్లిదండ్రులకు నీళ్ళు త్రాగించండి. దశరథమహారాజు పాత్రలో నీళ్ళు తీసికొని, శ్రవణ కుమారుని తల్లిదం డ్రులవద్దకు వచ్చి జరిగిన విషయమునంతను చెప్పగా శ్రవణకుమారుని మత్యుసమాచారము విని పుత్రవియోగము వలన తమ ప్రాణము లను వదిలారు.

సూర్యచంద్రులు ఆకాశమున నున్నంత వరకు తల్లిదండ్రులకు శ్రవణ కుమారుడు చేసిన సేవాభక్తి గూడా సదైవ శాశ్వతంగా ఉంటుంది.

"మాత-పితాకో తీర్థకరానే శ్రవణ చలా కుమార ।
మార్గ మే రాజా దశరథ కా శ్రవణ హువా శికార
మరతే దమ తక్ థా కంఠ మే మాత-పితా- కా ప్యార
సభీ చాహతే జుగ జుగ జియే ఐసా శ్రవణకుమార ।

ఛత్రపతి శివాజీ మాతృభక్తి

మహారాష్ట్రమునకు సంబంధించిన మహా పురుషుడు ఛత్రపతి శివాజి. ఆయన తల్లిపేరు బీజాబాయి. ఒకసారి ఆమెచాలా జబ్బున పడినది. ఆరోగ్యము దినదినానికి తగ్గడం మొదలైంది. శివాజీ చాలా చింతితుడైనాడు. వైద్యుని వద్దకు వెళ్ళి తల్లి అనారోగ్యమును గురించి విన్నవించాడు. 'నీ తల్లి కొరకు సింహం పాలు తీసికొని రాగలిగితే మీ తల్లికి ప్రాణరక్షణ జరుగుతుందని' వైద్యుడు సలహా యిచ్చాడు.

వైద్యుని సలహా విని, రాత్రి సమయంలో ఘోరారణ్యములో ప్రవేశించాడు. శీతాకాలపు

రోజులు. ప్రాతఃకాలము ఆడ సింహం అరణ్యంలో వృక్షముచాటున చలికి వణకు చుండినది. నిర్భయంగా శివాజీ ఆ సింహం వద్దకు పోయి పాత్రలో పాలు పితుకుకొని వచ్చి వైద్యునకిచ్చాడు. సింహం పాలలో మందు కలిపి వైద్యుడు బీజాబాయికి త్రాగించాడు. ఆమె ఆరోగ్యవంతురాలైనది. తన ప్రాణాలను గూడా లెక్కించకుండా తల్లికొఱకై అచంచల భక్తిని చూపించిన వీరశివాజీ ధన్యులు.

నా తల్లి

(క్రాంతికారి ఐన రామప్రసాద్ బిస్మిల్ ఉరికంబం మీదికి పోయేముందు తన తల్లికి వ్రాసిన కృతజ్ఞతాజ్ఞాపనము)

నా తల్లిగారు పదకొండు సంవత్సరముల వయస్సులో వివాహితురాలై షాహజాహాపురం వచ్చింది. అప్పుడామె పూర్తిగా చదువు రానిదిగా గ్రామీణ కన్యవలెనుండిడిది. షాహజాహాపురంనకు వచ్చిన రోజులలో మా అవ్వగారుతన చెల్లిలిని పిలిపించి నా తల్లికి గృహకార్యములందు శిక్షణ యిప్పించినది. కొలది దినములకే మా తల్లిగారు గృహము నకు సంబంధించిన పనులన్నియు తెలిసికొని భోజనాదులను చక్కగాచేసి పెట్టుచుండెడిది. నేను జన్మించిన తరువాత ఐదారు సంవత్స రములకు హిందీ చదవడము ప్రారంభిం చింది. చదువు కోవాలనే కుతూహలం ఆమెకు స్వయంగా కలిగినదే. ఆ పేటనుండి మా యింటికి వచ్చే స్నేహితురాండ్రలో, చదువు కొన్నవారి నుండి తల్లిగారు అక్షరాలు నేర్చు కొనేది. ఈ విధంగా గృహకార్యములు పూర్తి అయిన మీదట ఏకొంచెం సమయం దొరికినా అప్పుడామె చదవడం-వ్రాయడం నేర్చుకొనుచుండెడిది. పరిశ్రమ ఫలితంగా ఆమె కొలది రోజులలోనే దేవనాగరి (సంస్కృతభాష వ్రాయుటకుపయోగించే లిపి. అదే ఇప్పుడు హిందీకి గూడా ఉపయోగిస్తు న్నారు.) పుస్తకమును చదువగలిగింది. నా చెల్లెండ్రకు చిన్నవయస్సులోనే మాతల్లిగారే విద్య నేర్పుచుండెడిది. నేను ఆర్యసమాజంలో చేరినప్పటినుండి తల్లిగారితో బాగా వార్తాలా పములు జరుగుచుండెడివి. అప్పటికంటె ఇప్పుడు ఆమె ఆలోచనలో ఉదారత కనపడు చుండెడిది. నాకాలాంటి మాతృమూర్తి లభించ నిచో నేనున్నూ సాధారణ మానవునివలె సంసార చక్రములో పడి జీవితము గడుపు చుండెడివాడినేమో. విద్యనేగాక, క్రాంతి జవన విధానములో గూడా మేజినీకి తల్లి శిక్షణ యిచ్చినట్లుగా మాతల్లి మాకు నేర్పించి సమయమొచ్చినప్పుడు ఆ విషయాలన్నిటిని నేను వ్రాయగలను. "ఎవరికి ప్రాణ హానికలి గించరాదనేదే". ఆమె నాకిచ్చిన అన్నిటికంటే ముఖ్యమైన ఆదేశము. ఆమె యిచ్చిన ఆదేశాన్ని పూర్తిచేయుటలో వివశుడనై ఒకటి రెండు మార్లు ప్రతిజ్ఞాభంగం కూడా చేయవలసివచ్చింది.

ఓ జన్మనిచ్చిన తల్లీ !

ఈ జీవితములో మీ ఋణం తీర్చుకొను టకు అవసరమే లభించలేదు. ఈ జన్మలోనే కాదు. ఎన్ని జన్మలెత్తినను కూడా జీవిత మంతా ప్రయత్నించినప్పటికి మీ ఋణాన్ని తీర్చుకోలేను. మీరు చూపించిన ప్రేమ, నా జీవిత నిర్మాణంలో మీరు నన్ను పెంచి పెద్ద జేసిన తీరు-అవర్ణనీయము. మీరు ఏ విధంగా వేదవాణి ద్వారా నాకుప దేశించి, నన్ను మానవునిగా మలచిన సంఘటనలన్నీ నాకు స్మరణకు వస్తున్నవి. మీ దయవలననే నేను దేశసేవలో నిమగ్నుడనైతిని. ధార్మిక జీవనంలో గూడా మీ ప్రోత్సాహమే నాకు సహాయపడింది. నాకు ప్రాప్తించిన విద్యా విజ్ఞానాలకు కారణం మీరే. ఆఘనత మీకే దక్కుతుంది. మీ రొసంగిన మనోహర ఉపదే శములు స్మృతికి వచ్చినప్పుడు మీ మంగళ మయ స్వరూపం ధ్యానం చేసినప్పుడు-నా శిరస్సు మీ పాదముల ముందు అవనత మగుచున్నది.

నన్ను దండించదలచినప్పుడు గూడా మీరెంతో స్నేహమయ ముద్రలో ప్రతి విషయాన్ని తెలియజేయుచుండెడి వారు. నేను పొగరుబోతుగా సమాధానమిచ్చినప్పుడు గూడా.

నాయనా ! నీకేది మంచిదనిపించితే అదే చేయి, కాని, అలా చేయడం మచిదికాదు. దీని వలన సత్ఫలితంరాదంటూ ప్రేమవాక్కు లతో నాకు తెలిపేదానవు.

జీవనధాత్రీ ! మీరు ఈ శరీరమునిచ్చి పాలిచ్చి, పోషించడమేగాక, ఆధ్యాత్మిక, ధార్మిక సామాజికంగాను అభ్యున్నతికి మీరే సదా సహాయకులుగానున్నారు. జన్మ-జన్మాం తరంలో గూడా మీలాంటి తల్లే లభించుగాక. గొప్పసంకటములందున్నూ మీరు నన్ను ధైర్యంగా ఉంచగలిగారు. ఎల్లప్పుడు మీరు మీ సహజమైన ప్రేమసీయూషవాక్కుల ద్వారా నన్ను ఓదార్చుచుండెడివారు. మీ దయ వలన నా జీవితంలో ఏ కష్టాన్ని అనుభవించలేదు. ఈ ప్రపంచంలో నాకు ఏ భోగ విలాసం మీద గాని, ఐశ్వర్యం మీదగాని కోరికలేదు కేవలం ఒకే కోరిక అదేమంటే శ్రద్ధతో మీచరణ సేవ చేసి నా జీవితమును సార్ధకపరుచుకోవాలని కాని ఈ కోరిక కోరికగానే ఉండిపోతుందేమో పూర్తికానట్లు తోస్తున్నది. దుఃఖపూర్ణమైన నామృత్యు సమాచారము మీకు వినిపించ బడుతుంది. అమ్మా ! మీ పుత్రుడు తల్లులకు తల్లియగు భారతమాత సేవలో తన జీవిత మును బలివేదికకు పూర్ణాహుతి యిచ్చాడని మీ గర్భమున పుట్టినందుకు-మీ గర్భమును కళంకితం చేయలేదని తెలిసికొని, మీరు ధైర్యముగా ఉంటారని విశ్వసించుచున్నాను.

నా ప్రతిజ్ఞలో దృఢంగా నిలిచాను. స్వతంత్ర భారతచరిత్ర వ్రాయునప్పుడు ఆచరిత్ర పుటలలో సువర్ణాక్షరములతో మీ పేరున్నూ వ్రాయబడుతుంది. గురుగోవింద సింహుని ధర్మపత్ని తన పుత్రుల మృత్యు వార్తను విని గురువు పేరు కొఱకై ధర్మసం రక్షణార్థము తన పుత్రులు బలియైపోయినం దులకు సంతోషించి మిఠాయిలు పంచిపెట్టి నదట. ఓ జన్మధాత్రీ ! అంతిమ సమయంలో గూడా నా హృదయం ఏ మాత్రం చలించ కుండా ఉండాలని మీ చరణకమలములకు ప్రణమిల్లి, పరమాత్మను స్మరిస్తూ శరీరం త్యాగం చేయునట్లు వరమిమ్ము.

ఉపసంహారము

"యాన్యస్మాకం సుచరితాని తాని త్వయోపా స్యాని నో ఇతరాణి"

ఇది తైత్తిరీయోపనిషత్తునందున్న సూక్తి దీని భావము :

తల్లిదండ్రులు తమ బిడ్డలకు, ఆచార్యులు తమ శిష్యులకు సదా సత్యమైన ఉపదేశ ములను యిచ్చుచుండాలి. ధర్మసంబంధమైన కర్మలను చేయుమని, దుష్టకర్మలను త్యజించ మనియు ఉపదేశించాలి. ఏది సత్యమని నమ్ముదురో, వాటిని తెలియజేసి వాటిని ప్రచారం చేయాలి. ఏ దుష్టాచారులను అభి వృద్ధి నిరోధకులను నమ్మవద్దు. తల్లి దండ్రులు ఆచార్యులు ఆజ్ఞాపించే ఉత్తమ

కర్మలనే చేయాలి. వాటినే పాటించాలి. విద్యా సంబంధంగా, ఆచరణ సంబంధముగా ఉండే ఉత్తమ శ్లోకములను, నిఘంటువులను నిరుక్తము, అష్టాధ్యాయి సూత్రములను మరియు ఇతర సూత్రములను, వేదమంత్ర ములను కంఠస్థం చేయించి, వాటికి అర్థతాత్ప ర్యములను విద్యార్థులకు బోధించుచుండాలి. "సత్యార్థప్రకాశ" మందు ప్రథమ సముల్లా సము, పరమేశ్వర నామములకు చేసి వ్యాఖ్యానమును తెలిసికొని, అలానే ఉపాసిం చాలి. ఆరోగ్య ప్రాప్తికొరకు, శరీరదృఢత్వము కొరకు తగునట్లుగా బోజనాచ్ఛానాదు లుండునట్లు వ్యవహరించాలి. విద్యార్థులకు నేర్పాలి. ఆకలి ఎంత ఉన్నదో, దానికి కొంచెం తక్కువగా భోజనం చేయాలి. మద్య మాంసాదులను సేవించరాదు. తెలియని చోట, లోతుగా జలమున్నచోట ప్రవేశించ రాదు. జలజంతువుల వలన లేక మరే వస్తువుల వలన దుఃఖం సంభవిస్తుంది. ఈత రానిచో మునిగిపోవడం గూడా సంభవించి మృత్యువాతబడతారు. "నావిజ్ఞాతే జలాశయే" ఇది మను మహర్షి హెచ్చరిక. తెలియని జలాశయాలలో ప్రవేశించి స్నానాదులు చేయరాదు.

**"మాతా శత్రుః పితా వైరీ యేన బాలో న పాఠితః।
న శోభతే సభామధ్యే హంసమధ్యే బకో యథా॥**

ఇది ఒకానొక కవి సూక్తి. తమ సంతతికి విద్యా బుద్ధులు గరపని తల్లిదండ్రులు-పిల్ల లకు శత్రువులే. విద్యాగంధం లేని పిల్లలు విద్వాంసుల సభలందు-హంసలమధ్య కొంగల వలె శోభించరు. గౌరవమును పొంద జాలరు. అవమానముగా చూడబడతారు. అందువలన తమ బిడ్డలకు సర్వవిధముల విద్యలను నేర్పి, ధర్మమును బోధించి సభ్యతను అలవరిచి ఉత్తమ విద్వాంసులను చేయడం-తల్లిదండ్రుల పరమ ధర్మము బాధ్యత, యశస్కరమున్ను.

"సత్యార్థ ప్రకాశము" నుండి

విశేషము : మర్యాదా పురుషోత్తముడైన శ్రీరామచంద్రుడు, యోగరాజైన శ్రీకృష్ణుడు, ధర్మరాజైన యుధిష్ఠిరుడు, శ్రవణ కుమారుడు, మహారాణా ప్రతాప్, వీరశివాజీ, ఆదిశంకరా చార్యులు, మహాత్మాబుద్ధుడు, మహావీరస్వామి, మహర్షి దయానంద, మహాత్మాగాంధి, అమర శహీద్ భగత్‌సింగ్, పండిత రామ ప్రసాద్ బిస్మిల్ మొదలైన క్రాంతికారులకు జన్మ ధాత్రులు నిర్మాణ కర్తలు సుశిక్షకులైన వారందరు తల్లులేగదా ?

కాని-నేడు ఆర్యావర్త పుణ్యభూమి మీద జన్మించిన తల్లులు తమను తామే పాశ్చాత్య సభ్యతలో ముంచుకుంటున్నారనితెలుపుటకు ఎంతో దుఃఖం కలుగుతుంది. గుడ్డిగా అనుకరిస్తున్నారు. కుక్కలను, పిల్లులను ఎక్కువగా ప్రేమిస్తూ, స్వసంతానాన్ని నిర్లక్ష్యం చేస్తూ, ఆయాల (సేవకురాండ్ర) చేతులలో ఆడుకొనునట్లు చేయడం మొదలైన దుర్గుణములు తల్లులలో చోటు చేసికొంటు న్నాయి.

ఏ దేశంలో స్త్రీ జాతి పతనమైనదో ఆ రాష్ట్రమున్ను పతనంవైపే పోతుంది. ఏ దేశంలో స్త్రీ జాతి ఉన్నతంగా, ఉత్తమంగా ఉంటుందో, ఆదేశం అభివృద్ధి చెందుతుంది. అందువలన, తల్లులందరు మీ గౌరవమును మరియు సంస్కృతి మహత్వమును గుర్తించి యథార్థమైన గౌరవమును సంపాదించండి.

వివిధ సూక్తులు :

1) మాతా నిర్మాతా భవతి

బిడ్డలను చక్కగా నిర్మాణం చేయడం వలననే ఆమెకు మాతృశబ్దం అన్వయిస్తుంది.

2) నాస్తి మాతృసమో గురుః

తల్లితో సమానమైన గురువులేడు.

3) జననీ జన్మభూమిశ్చ స్వరాగదపి గరీయసీ

జనని-జన్మభూమి స్వర్గమ కంటె గొప్ప.

4) మాతా గురుతరా భూమేః

తల్లి పృథ్వికంటే బరువైనది గౌరవనీయ మైనది.

5) మాతృవత్పరదారేషు

పరస్త్రీని తల్లివలె తలంచాలి.

6) సహ్రంతు పితౄన్ పుత్రోఽ హం పృథివ్యాః

వేయి తండ్రులకంటే గౌరవంలో తల్లియే అధికురాలు.

7) మాతా భూమిః పుత్రోఽ హం పృథివ్యాః

భూమి నాకు తల్లి నేను ఆమె పుత్రుడను.

8) మాత్రా భవతు సంమనాః

తల్లి మనస్సును స్తోష పెట్టువాడు పుత్రుడు

9) గురూణాం మాతా గరీయసీ

గురుజనులలో ఉన్నతస్థానంతల్లిదే.

సుభాషితాలు

**1) అభివాదనశీలస్య నిత్యం వృద్ధోపసేవినః।
చత్వారి తస్య వర్ధన్తే ఆయుర్విద్యాయశోబలమ్॥**

భావం : ఎవరైతే నమస్కరించే స్వభావం కలవారై పెద్దలనుగౌరవిస్తారో వారికి ఆయువు, విద్యా, యశస్సు, బలము ఈ నాలుగు వృద్ధి చెందుతాయి.

2) ప్రియవాక్య ప్రదానేన సర్వే తుష్యంతి జంతవః। తస్మాత్ తదేవ వక్తవ్యం వచనే కా దరిద్రతా॥

భావం : మంచిగా మాట్లాడటం వల్ల అందరికి ఆనందంగా ఉంటుంది. అందుకనే మంచిగానే మాట్లాడాలి. మంచిగా మాట్లాడటంలో దారిద్ర్యమేముంది ?

3) కాకచేష్టా బకోధ్యానం శ్వాననిద్రా తథైవ చ। అల్పాహారీ మితభాషి చ విద్యార్థీ పంచలక్షణమ్॥

భావం : కాకిలాంటి చలాకీతనము, కొంగ లాంటి ధ్యానము, కుక్కలాంటి (తక్కువ) నిద్ర, తక్కువ తినటము, తక్కువ మాట్లాడటము ఈ 5 విద్యార్థుల లక్షణాలు.

4) ఉదితే సూర్య రక్త రక్తశ్చాస్తమయే తథా। సంపత్తౌ చ విపత్తౌ చ మహతామేకరూపతా॥

భావం : సూర్యుడు ఉదయించేటప్పుడు మరియు అస్తమించేటప్పుడు ఒకేరకమైన ఎరుపురంగులో ఉంటాడు. అలాగే మహాను భావులు కూడా సంపదలొచ్చినా ఆపద లొచ్చినా ఒకే రకంగా ఉంటారు.

5) శ్లోకార్ధేన ప్రవక్ష్యామి యదుక్తం గ్రంథ కోటిభిః। పరోపకారః పుణ్యాయ పాపాయ పరపీడనమ్॥

భావం : కోటి గ్రంథాల్లో చెప్పిన విషయాన్ని నేను సగం శ్లోకంలోనే చెప్పేస్తాను. ఇతరులకు సహాయం చేయటమే పుణ్యము ఇతరులను పీడించటమే పాపము.

6) సుఖార్థినః కుతో విద్యా నాస్తి విద్యార్థినః సుఖమ్। సుఖార్థీ నా త్యజేత్ విద్యాం విద్యార్థీవా త్యజేత్ సుఖమ్॥

భావం : సుఖాన్ని కోరుకునే వారికి విద్య ఎలా వస్తుంది ? అలాగే విద్యార్థులకు సుఖము ఉండదు. కావున సుఖాన్ని కోరుకునే వారు విద్యను వదులుకోవాలి, అలాగే విద్యను కోరుకునేవారు సుఖాన్ని వదులుకోవాలి.

7) నిషేవతే ప్రశస్తాని నిందితాని న సేవతే। అనాస్తికః శ్రద్ధధాన ఏతత్ పండితలక్షణమ్॥

భావం : మంచిపనులను ఆచరించటం, చెడుపనులను ఆచరించకపోవటం, దేవుడిని నమ్ముట మరియు చేసేపనిపట్ల శ్రద్ధ కలిగి ఉండటం ఇవి పండితుల లక్షణాలు.

MEDITATION ON OM

Swara is the Atman as seen or grasped by mind. His highest name is OM, so repeat it, meditate on it and think of all its wonderful hature and attributes. Repeating the OM continuously is the only true worship. It is not a word, it is God himself. Why should there be repetion ? It is the greatest stimulus that can be given to the spirtual Samskars. So this repetition of OM and thinking of its meaning is keeping good company in your own mind.

-Swami Vivekananda

ఓమ్‌ను ధ్యానించడం

-చలవాది సోమయ్య

ఈశ్వరుడు అనగా పరమాత్మ. అతడు మనస్సుచే చూడబడుచున్నాడు లేక గ్రహించ బడుచున్నాడు. అతని అత్యున్నత నామం ఓమ్. కనుక మాటిమాటికి ఆ నామాన్ని స్మరిస్తూ దానిని ధ్యానిస్తూ ఉండాలి మరియు దాని అద్భుత స్వభావాన్ని గుణగణాలను ఆలోచిస్తూ ఉండాలి. నిరంతరం ఓమ్‌ను పలుమార్లు స్మరిస్తూ ఉండడమే అసలు నిజమైన పూజ. అది ఒక పదం కాదు. అది కేవలం భగవంతుడే. అందుకని పలుమార్లు దానిని స్మరిస్తూ ఉండాలి ? అలా చేయడం పారమార్థిక సంస్కారాలకు (spirtual Samskars) ఉత్తమోత్తమ ప్రేరకమౌతుంది. కనుక ఓమ్‌ను పలుమార్లు స్మరిస్తూ ఉండడం మరియు దాని అర్థాన్ని ఆలోచిస్తూ ఉండడం వల్ల నీ మనస్సులో సద్భావ పరంపర కొనసాగుతుంది. -స్వామి వివేకానంద

ఓమ్‌లో ఎంత విశేషమైన, విస్తృతమైన అర్థం యిమిడి ఉందో ఈ క్రింద యివ్వబడిన అవధాతు సూత్రము దాని అర్థాన్ని గ్రహించినపుడు మనకిదితెలుస్తుంది.

అవధాతు సూత్రము

'అవ' రక్షణ, గతి, కాంతీ, ప్రీతి, తృప్తి,అవగమ, ప్రవేశ, శ్రవణ, స్వామ్యర్థ, యాచన, క్రియా, ఇచ్ఛా, దీప్తి, అవాప్తి, ఆలింగన, హింసా, దాన, భాగ, వృద్ధిశ్చ 'అవ' ధాతువు నుండి 'ఓం' శబ్దము నిష్పన్నము. అవకు 19 అర్థాలున్నాయి. అవి ఇవి.

1) **రక్షణ : అవతి రక్షతి సంసారం ఇతి ఓమ్.** పరమేశ్వరుడు ప్రపంచమును రక్షిస్తాడు గనుక ఆయన 'ఓం' పద వాచ్యుడే.

2) **గతి : అవతి గమయతి చాలయతి భ్రామయతి సంసారమ్ ఇతి ఓమ్** సర్వవ్యాపకుడైనందున తాను స్వయంగా కదలకుండా పరమాణువు నుండి బ్రహ్మాండము దాకా లోక లోకాంతరములను కదిలిస్తున్నాడు. త్రిప్పు తున్నాడు.

3) **కాంతి : అవతి, ఆప్యతే, కామ్యతే, శోభతే వా తద్ ఓమ్.** -ప్రకృతి నుండి అందమైన ప్రపంచమును సృష్టించి సుఖాన్నిచ్చేవాడు కనుక 'ఓమ్' కోరదగినవాడు.

4) **ప్రీతి : అవతి ప్రీణాతి స్నేహయతి వా తద్ ఓమ్** ఈశ్వరుడు అందరితో ప్రేమ భావాన్ని కలిగి ఉండి ఆనందాన్నిస్తాడు కనుక భక్తులు 'ఓమ్'తో స్నేహం చేస్తారు.

5) **తృప్తి : అవతి, తృప్తోభవతి ప్రాణినో వా తర్పయతి తద్ ఓమ్.** ఈశ్వరుడు ఎల్లప్పుడు తృప్తిగా ఉండి (తన సుఖం కొరకు ఏమీ కోరకుండా) అన్ని ప్రాణులకు అన్నిరకాల సుఖాలను ఇచ్చి తృప్తి పరుస్తాడు.

6) **అవగమ : అవతి అవగచ్ఛతి జానాతి చరాచరం జగత్ తద్ ఓమ్** ఈశ్వరుడు పరమాణవు నుండి బ్రహ్మాండము వరకు అన్ని పదార్థముల అన్ని ప్రాణుల భావాలు తెలిసి కొంటాడు.

7) **ప్రవేశ : అవతి సూక్ష్మత్వాత్ వ్యాపకత్వాచ్చ సర్వత్ర ప్రవిశతి వ్యాప్నోతి తద్ ఓమ్.** ఈశ్వరుడు సూక్ష్ముడు, సర్వవ్యాపకుడైనందున అతడు అంతటా ప్రవేశించి ఉన్నాడు.

8) **శ్రవణ : అవతి శృణోతి శ్రావయతి వా తద్ ఓమ్.** ఈశ్వరుడు అత్యంత రహస్యమైన వార్తాలాపాన్ని, పిలుపును వింటాడు. ప్రాణులకు వినేశక్తిని ఇస్తాడు.

9) **స్వామ్యర్థ : అవతి ఆధిపత్యం కరోతి తద్ ఓమ్.** ఈశ్వరుడు సృష్టిని శాసించి ఆధిపత్యం కలిగి ఉన్నాడు కనుక ఓమ్ సృష్టికి స్వామి.

10) **యాచన : అవతియాచందే భక్తా యామ్ తద్ ఓమ్.** సకల ఐశ్వర్యములకు స్వామి దాత కనుక భక్తులు అతని నుండి అభీష్టమైన వస్తువును కోరుకుంటారు.

11) **క్రియా : అవతి నిష్కామ కర్మ కరోతీతి ఓమ్.** ఈశ్వరుడు నిష్కామ భావంతోజగత్తును రచించి కర్మఫలములనిస్తాడు.

12) **ఇచ్ఛా : అవతి ఇచ్ఛతి ప్రాణినాం కల్యాణం ఇతి ఓమ్.** ఈశ్వరునికి ఏ విధమైన కోరికలు లేకున్నా అన్ని ప్రాణుల హితం కొరకు పనులు చేస్తాడు.

13) **దీప్తి : అవతి దీప్యతే జ్ఞాన స్వరూపత్వాద్ దీపయతి వా ప్రకాశయుక్తాన్ సూర్యాదీనితి ఓమ్.** ఈశ్వరుడు జ్ఞానస్వరూపి కనుక తేజస్వియై ప్రకాశయుక్తమైన సూర్యచంద్రులను, నక్షత్రాదులను ప్రకాశింపజేస్తున్నాడు.

14) **అవాప్తి : అవతి అవాప్నోతి వ్యాపకత్వమ్ ప్రాప్నోతి ప్రాప్యతే ఇతి ఓమ్.** పరమాత్మ సర్వ వ్యాపకుడైనందున అందరికీ అందుబాటులో ఉంటాడు.

15) **ఆలింగన : అవతి ఆలింగయతి చిత్రీకరోతి జగద్ ఇతి ఓమ్.** పరమాత్మ చిత్ర విచిత్రమైన ప్రపంచపు పదార్థములను నిర్మిస్తాడు.

16) **హింసా : అవతి హినస్తి దుష్టాన్ అన్యాయకారిణో జనాన్ ఇతి ఓమ్.**

ఈశ్వరుడు దుష్టులను అన్యాయకారులను పీడిస్తాడు.

17) దాన : అవతి దదాతి వివిధాన్ పదార్థాన్ ఇతి ఓమ్. జీవులందరికీ దేహము, ఇంద్రియాలు, బుద్ధి, వివిధ సుఖకారకము లైన పదార్థములను ఇస్తాడు.

18) భాగ : అవతి విభజతి పదార్థాన్ ఇతి ఓమ్. పరమాత్మ విభిన్న పరమాణువులను కలిపి విడదీసి సృష్టి ప్రళయాలు చేస్తాడు. ధాన్య ఫల శాకాలను పరిపక్వం చేస్తాడు.

19) వృద్ధి : అవతి వర్ధయతి జంతు వృక్షాదీన్ ఇతి ఓమ్. పరమాత్మ పరమాణువుల సంయోగంతో సకల వృక్ష, జంతువులను పంచభూతాలను వృద్ధి చేస్తాడు.

ఓం ఖం బ్రహ్మ -యజు 40-17

ఓం వాచక పరమాత్మ ఆకాశంవలె సర్వ వ్యాపకుడు.

ఓం క్రతో స్మర -యజు. 40-15

ఓ కర్మిష్టి జీవా ఓం ను స్మరించు.

తస్మాదోమిత్యుదాహృత్య యజ్ఞదాన తపః క్రియాః । ప్రవర్తంతే విధానోక్తాః సతతం బ్రహ్మవాదినామ్ ॥ -గీత 17-24

కావున వైదికులు ఓం శబ్దాన్ని పలికి శాస్త్రోక్తాలైన యజ్ఞ దాన తపఃకర్మలను చేస్తుంటారు.

ఓమిత్యేకాక్షరం బ్రహ్మ వ్యాహరన్ మామనుస్మరన్। యః ప్రయాతి త్యజన్ దేహం స యాతి పరమాంగతిమ్ ॥ -గీత 8-13

ఏకాక్షరమైన ఓం ను పలుకుతూ పరమాత్మను స్మరిస్తూ దేహాన్ని విడిచి పయనించేవాడు పరమగతిని (మోక్షాన్ని) పొందుతాడు.

ఓంకార శబ్దము పరమాత్మ సర్వోత్తమ నామం. ఎందుకంటె ఇందలి అ, ఉ, మ్ అనే మూడక్షరాలు కలిసి 'ఓమ్' పదమైనది. ఈ పేరువల్ల పరమాత్మ అనేక నామాలు గ్రహింపబడుచున్నవి. ఎట్లన- 'అ కారం' వల్ల విరాట్, అగ్ని, విశ్వుడు మొదలగు వాటికి 'ఉ కారం' వల్ల హిరణ్యగర్భుడు, వాయువు, తైజసుడు మొదలగువాటికి 'మ కారం' వల్ల ఈశ్వరుడు, ఆదిత్యుడు, ప్రాజ్ఞుడు మొదలగు వాటికి ఓం నామం వాచకం గ్రాహకం అవుతోంది. దానికి ఇలాగే వేదాది శాస్త్రాల్లో స్పష్ట వ్యాఖ్యానం ఉంది. కనుక ప్రకరణాను కూలంగా ఈ పేర్లన్నీ పరమాత్మవే. ఇవిగాక పరమాత్మకు అసంఖ్యాక నామాలున్నాయి. ఎందుకంటే పరమాత్మ గుణ, కర్మ, స్వభావాలు అనంతాలైనట్లే అతని నామాలు అనంతాలు. వాటిలో ఒక్కొక్క గుణ కర్మ స్వభావానికి ఒక్కొక్క పేరుంది. దీనిని బట్టి నేను వ్రాసిన పేర్లు కడలి (సముద్రం)లో నీటి చుక్క వలెనని ఎంచాలి. ఎందుకంటే వేదాది శాస్త్రాల్లో పరమాత్మ గుణ కర్మ స్వభావాలు అగణితంగా వ్యాఖ్యాతాలై ఉన్నాయి. ఆ వేద శాస్త్రాలను చదవడం, చదివించడం వల్ల బోధపడ తాయవి. వేదాది శాస్త్రాలను చదివే వారికి అన్యపదార్థాల జ్ఞానం పూర్ణంగా కలుగుతుంది

అ + ఉ + మ్ = ఓ3మ్ - రక్షకుడు

అకారంలోని 3 భగవన్నామములు విరాట్, అగ్ని, విశ్వుడు.

విరాట్ : అతడు బహుప్రకారమగు జగత్తును ప్రకాశింపజేయువాడు గనుక 'విరాట్'.

అగ్ని : అతడు జ్ఞాన స్వరూపుడు, సర్వజ్ఞుడు, తెలియుటకు పూజింపబడుటకు యోగ్యుడు గనుక 'అగ్ని'.

ఉకారములోని 3 భగవన్నామములు హిరణ్యగర్భుడు వాయువు తైజసుడు.

హిణ్యగర్భుడు : అతని యందు సూర్యాది తేజోమయ లోకములు ఉత్పన్నములై అతని ఆధారమందుండును. అతడు సూర్యాది తేజస్వరూప పదార్థముల గర్భము-అనగా ఉత్పత్తిస్థానము, నివాసస్థానము గనుక అతడు హిరణ్యగర్భుడు.

వాయువు : అతడు చరాచర జగత్తును ధరించి జీవింపజేసి, లయింప జేయువాడను బలవంతుల కంటే బలవంతుడునగుటచే వాయువు.

తైజసుడు : తాను స్వయం ప్రకాశకుడై సూర్యాది తేజోమయ పదార్థములను ప్రకాశపరచువాడు గనుక తైజసుడు.

'మ' కారములోని 3 భగవన్నామ ములు-ఈశ్వరుడు, ఆదిత్యుడు, ప్రాజ్ఞుడు.

ఈశ్వరుడు : అతనికి సత్య విచారశీల జ్ఞానం, అనంత ఐశ్వర్యం కలదు గనుక ఈశ్వరుడు.

ఆదిత్యుడు : అతడెన్నడు నశించని వాడు గనుక 'ఆదిత్యుడు'.

ప్రాజ్ఞుడు : అతడు భ్రాంతి రహితుడు, జ్ఞానయుక్తుడు సమస్త చరాచరలోక వ్యవహార ములను ఉన్నదున్నట్లు తెలియువాడు గనుక ప్రాజ్ఞుడు.

అ	ఉ	మ్
జాగ్రత్	స్వప్నః	సుషుప్తిః
సృష్టిః	స్థితిః	ప్రళయః
ప్రాణః	అపానః	వ్యానః
పృథివీ	అంతరిక్షం	ద్యౌః
అస్తి	భాతి	ప్రీతిః
సత్	చిత్	ఆనందః
శుద్ధః	బుద్ధః	ముక్తః
భూః	భువః	స్వః
భువనం	భూతం	భవితా
ఈశ్వరః	జీవః	ప్రకృతిః
ఋక్	యజుః	సామ
బ్రహ్మ	విష్ణుః	రుద్రః
పితా	పుత్రః	మాతా

పైన వివరించిన విషయం ఆధారంగా ఓం కారంలో ఎంతటి విస్తృతమైన అర్థం యిమిడి ఉన్నదో మనకు అవగతమౌ తున్నది. కనుక పరమేశ్వరుని ఈ సర్వోన్నత నామాన్ని నిరంతరం స్మరిస్తూ అందలి అర్థాన్ని మననం చేస్తూ ఉండడం వల్ల మనస్సు పవిత్రమై త్వరలోనే పరమేశ్వర సాక్షాత్కారం మనకు లభించి ముక్తిని కూడ పొందగలమని ఆశిస్తున్నాము.



గోపాల్ గులేకర్ గారి ప్రథమ వర్థంతి

మరణం : 18-03-2018

కీ॥ శే॥ గోపాల్ గులేకర్ గారు కార్వాన్ ఆర్య సమాజ సభ్యులు, నిస్వార్థపరులు, సమాజ సేవకులు, ఆర్య సమాజానికి విశేష సేవలు అందించినారు. ఈయన ప్రథమ వర్ధంతి సందర్భమున కుటుంబ సభ్యుల తరపున మరియు ఆర్య సమాజము కార్వాన్ తరపున భావపూర్ణ శ్రద్ధాంజలి.

ఉగాది నూతన సంవత్సర మరియు ఆర్య సమాజ స్థాపనా దినోత్సవ ఆహ్వానము

స్వస్తిశ్రీ వికారి నామ సంవత్సర చైత్ర శుక్ల ప్రతిపద శనివారము తేది 06-04-2019 రోజున ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ వారి ఆధ్వర్యములో ఉగాది నూతన సంవత్సర పర్వదినము మరియు ఆర్య సమాజ స్థాపనా దినోత్సవము సుల్తాన్‌బజార్‌లో గల సభాభవనము నందు ఉదయము 10-00 గంటల నుండి 12-00 గంటల వరకు కార్యక్రమము జరుపబడును. ఈ కార్యక్రమములో దేవయజ్ఞముతో పాటు భజనలు మరియు విద్వాంసుల చేత ప్రవచనములు ఇవ్వబడును. కావున సమస్త నగరద్వయ ఆర్య సమాజ కార్యకర్తలు, ఆర్యబంధువులు మరియు నగరవాసులు అధికసంఖ్యలో పాల్గొని కార్యక్రమమును సఫలముచేయగలరని మనవి.

ఆహ్వానించువారు :

అధ్యక్షులు :
డా॥ లక్ష్మణ్ సింగ్

కార్యదర్శి :
ప్రొ॥ విఠల్ రావు ఆర్య

ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ

మూడవ యోగసాధన శివిరము

స్వస్తిశ్రీ వికారి నామ సంవత్సర చైత్ర కృష్ణ తృతీయ సోమవారము నుండి ఆదివారము వరకు తేది 22-04-2019 నుండి 28-04-2019 వరకు ఏడు దినములు

ఈ శివిరంలో పాల్గొను సాధకుల సంఖ్య పరిమితము వారికి ఎనిమిది దినములు భోజనము, ఆవాస వసతులు కల్పించబడును. కావున 18 సంవత్సరాలు పైబడిన స్త్రీ పురుషులు వెంటనే 650/- రూపాయలు చెల్లించి స్వీకృతి పొందగలరు. స్వీకృతి పొందిన సాధకులు ఆదివారము అనగా 21-4-2019 నాడు సాయంత్రము 4-00 గంటల వరకు శివిర స్థలమునకు చేరుకోవలెను.

శివిర స్థలము : **యస్.పి.ఆర్. స్కూల్,** గ్రా॥ లింగాపూర్, కామారెడ్డి.

సూచన : బస్టాండ్ నుండి 4 కి॥ మీ॥ నిజాంసాగర్ మార్గములో కలదు.

నిర్వాహకులు : **వేద ధర్మ ప్రచార సమితి,** కామారెడ్డి

గౌరవ అధ్యక్షులు :
యం. ధర్మవీర్ గారు
9000056018

అధ్యక్షులు :
కంకణాల కిషన్, కామారెడ్డి
9440033446, 9000733446

కోశాధికారి :
కొమిరిశెట్టి శంకరయ్య
9392344855

Date of Publication 2nd and 17th of every Month, Date of Posting 3rd and 18th of every Month
आर्य जीवन 03-04-2019 Registered-Reg. No. HD/783/2018-20 RNI No. 52990/93

ఆర్య జీవన్

హిందీ - తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Editor : **Vithal Rao Arya**, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-500095.
Phone No. : 040-24753827, 66758707, Fax : 040-24557946
Annual Subscription Rs. 250/- సంపాదకులు : **విఠల్ రావు,** మంత్రి సభ

To,
Swami Swarupanand ji Saraswath
Arya Samaj Mandir,
Hanuman Road,
New Delhi-1100

వైదిక ప్రశిక్షణ శివిరము

నేటి బాలలే రేపటి పౌరులు. నేటి శిక్షణ మన భవితకు రక్షణ. సమగ్ర వ్యక్తిత్వ వికాసము కొరకు వైదిక ప్రశిక్షణ శివిరము 14 రోజుల పాటు ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర. -తెలంగాణ వారి ఆధ్వర్యములో వివిధ సమాజాలు మరియు విద్యాలయాలలో నిర్వహింపబడును. ఇందులో పిల్లలకు వ్యక్తిత్వ వికాసము, సమయపాలన, క్రమశిక్షణ, వేదమంత్రములు, నీతిశ్లోకాలు, భక్తి-భజనలు, యోగాసనములు మొదలగునవి నేర్పించబడును. కావున తమ తమ పిల్లలను అధిక సంఖ్యలో శివిరముకు పంపగలరు.

స్వస్తిశ్రీ వికారి నామ సంవత్సర చైత్ర కృష్ణ తృతీయ సోమవారము నుండి ఆదివారము వరకు
తేది **22-04-2019** నుండి **05-05-2019** వరకు 14 రోజులు.
అర్హత : **6వ తరగతి నుండి 10వ తరగతి విద్యార్థులకు.**
సమయం : **ఉదయం 9-00 గం॥ల నుండి 11-00 గం॥ల వరకు.**

సికింద్రాబాద్, హైదరాబాద్ జంటనగరాలలో శివిరములు నిర్వహింపబడు స్థలములు

1) ఆర్య సమాజము లాలాగూడ, 2) ఆర్య సమాజము కిషన్‌గంజ్, 3) ఆర్య సమాజము కుర్మగూడ, 4) ఆర్య సమాజము ఉమ్దాబజార్, 5) ఆర్య సమాజము పాట్ మార్కెట్, సికింద్రాబాద్, 6) లిటిల్ బర్డ్ హై స్కూల్, ఓల్డ్ సఫిల్‌గూడ, సికింద్రాబాద్, 7) వినాయక్ నగర్, ఓల్డ్ సఫిల్‌గూడ, సికింద్రాబాద్, 8) ఆనంద్‌బాగ్, మల్కాజ్‌గిరి, సికింద్రాబాద్, 9) రామంతాపూర్, 10) శివాలయము, ఉప్పల్, 11) ఉప్పల్, 12) మల్కాజ్‌గిరి, 13) చైతన్యపురి కమ్యూనిటి హాల్, దిల్‌సుఖ్‌నగర్, హైదరాబాద్.

ఇంకెవరైన శివిరములు నిర్వహించదలచిన వారు శివిర ప్రబంధకులను సంప్రదించగలరు.

శివిరముల ప్రబంధకులు మరియు సంచాలకులు :

హరికిషన్ వేదాలంకార్
9703066001

కె. విజయేంద్ర
9247131100

డా॥ విశ్వశ్రవాచార్య
8099333754

బాలబాలికల సదాచార ప్రశిక్షణ శివిరము

వ్యక్తి నిర్మాణమే రాష్ట్ర నిర్మాణము, దేశం గర్వించ దగ్గ వ్యక్తుల నిర్మాణమే
ఆర్య సమాజము ఇందూరు యొక్క ఉద్దేశ్యం.
ఈ వేసవి శివిరములో విద్యార్థులను దేశభక్తులుగా ఆరోగ్యవంతులుగా తీర్చిదిద్దుటకు
వివిధ అంశాలపై అవగాహన కల్పించడం జరుగుతుంది.

శుక్రవారము తేది 19 ఏప్రిల్ 2019 నుండి ఆదివారము 28 ఏప్రిల్ 2019 వరకు 10 దినములు.

అర్హత 8వ తరగతి నుండి 12 తరగతి విద్యార్థులకు. ఆవాసము అబ్బాయిలకు మాత్రమే,
అమ్మాయిలు ఉ॥ 6.00 గం॥ల నుండి రాత్రి గం॥ 7-30 ని॥ల భోజన సమయం వరకు.
భోజన శుల్కం రూ॥ 1000/- మాత్రమే. **స్థలము : ఆర్య సమాజము ఇందూరు (నిజామాబాద్)**
ప్రధానాచార్యులుగా వైదిక విద్వాంసులైన
శ్రీ అరుణ్ కుమార్ ఆర్యవీర్ గారు భాగ్యనగరం నుండి విచ్చేయనున్నారు.
సంప్రదించుటకు : **ఆచార్య వేదమిత్ర-9848853383.**

Editor : Vithal Rao Arya ● Email : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691
సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్‌రావు మంత్రి సభ, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph : 040-24753827, Email : acharyavithal@gmail.com
संपादक : श्री विठ्ठलराव मंत्री सभा ने सभा की ओर से आकृति प्रिन्टर्स में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।
प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-[illegible]